ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 10 सितम्बर 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 10 सितम्बर 2017 से 16 सितम्बर 2017

आश्विन कृ.– 04 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 88, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. करेगा 'सुरक्षित बचपन सुरक्षित भारत' के राष्ट्रव्यापी अभियान में भागीदारी

गत दिवस डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी के मुख्यालय में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित श्री कैलाश सत्यार्थी के साथ हुई बैठक में डी.ए.वी. तथा आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ. पूनम सूरी ने 11 सितम्बर से 16 अक्टूबर, 2017 तक 'सुरक्षित बचपन सुरक्षित भारत' हेतु जन–जागरूकता के लिए हो रही भारत–यात्रा में अपनी संपूर्ण भागीदारी करने का संकल्प लिया है।

विख्यात समाजसेवी श्री कैलाश सत्यार्थी बचपन से ही समाज में बदलाव लाने के लिए राजनीति नहीं केवल सेवा की भावना से कार्य करते रहे हैं। एक आर्यसमाजी परिवार में जन्मे श्री सत्यार्थी ने आर्य समाज और डी.ए.वी. संस्थाओं के साथ अपने जुड़ाव को घर वापसी कहते हुए बताया कि उनका पूर्ण जीवन एक सच्चे आर्य का जीवन रहा है और उनका परिवार भी एक समर्पित आर्यसमाजी परिवार है। बाल मज़दूरी तथा बच्चों पर होने वाली विभिन्न प्रकार की हिंसा से उन्हें मुक्ति दिलाने का मुद्दा लेकर श्री सत्यार्थी ने अपनी कलम से और अपनी गतिविधियों से राष्ट्र की सेवा की है। विश्व जगत् में उनको चौदह सम्मान, पुरस्कार तथा अवार्ड मिले हैं जिनमें 2014 में मिला 'नोबेल शान्ति पुरस्कार' सर्वोच्च है। श्री सत्यार्थी ने आर्य समाज की परंपरा विशेषकर महात्मा आनंदस्वामी के साथ अपने संपर्क और संबंधों की मधुर स्मृतियों को ताज़ा किया तथा 'सुरक्षित बचपन सुरक्षित भारत' नाम से किए जा रहे राष्ट्रव्यापी लोक जागरण अभियान की विशद् चर्चा की।

आदरणीय प्रधान डॉ. पूनम सूरी ने डी.ए.वी. को आर्य समाज की उपज बताते हुए उसके जन्म, विकास की 131 साल की यात्रा का परिचय देते हुए बताया कि डी.ए.वी. और आर्य समाज श्री कैलाश सत्यार्थी के उपरोक्त अभियान को एक दयानंदी संकल्प समझता है, और यह भी स्पष्ट किया कि अपनी 900 से अधिक संस्थाओं, लगभग 20 लाख विद्यार्थियों, 60 हज़ार अध्यापक/अध्यापिकाओं को इस अभियान में भागीदार बनाया जाएगा। उन्होंने कहा कि हम इस अभियान के तहत 11 सितम्बर, 2017 से आरम्भ होने वाली, 22 राज्यों से गुजरने वाली 11,000 किलोमीटर की यात्रा को सफल बनाने में अपनी ओर से पूर्ण योगदान करेंगे।

आदरणीय प्रधानजी ने श्री सत्यार्थीजी को डी.ए.वी. की ओर से प्रकाशित चारों वेदों के अंग्रेज़ी अनुवाद का एक सेट तथा डी.ए.वी. की भूमिका को प्रतिबिम्बित करती हुई पुस्तक डी.ए.वी. : *ए वे ऑफ लाइफ* भेंट की।

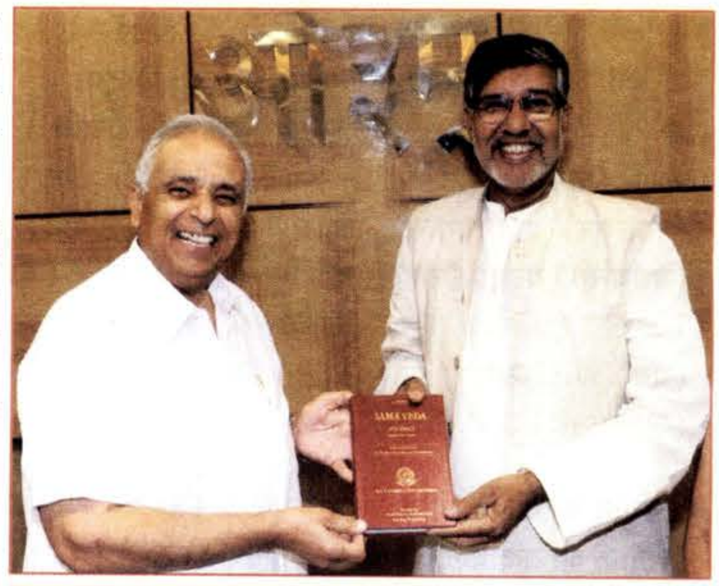

बिहार के बाढ़ पीड़ितों की सेवा में डी.ए.वी. ने बढ़ाये मददगारी हाथ

उत्तर–बिहार में आयी विनाशकारी बाढ़ ने लगभग 20 जिलों में भयानक तबाही मचा रखी है जिनमें लाखों की ग्रामीण एवं शहरी आबादी प्रभावित हुई है। फूस–टाट के बने घर कच्चे एवं पक्के मकान सहित ग्रामीण सड़कें बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो गई हैं, आवागमन लगभग ठप्प है, स्वास्थ्य सेवाओं पर भी काफी बुरा असर पड़ा है, विद्युत्–आपूर्ति बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में बंद होने से आम जनजीवन त्रस्त हो गया है।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के निर्देशन एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा बिहार के तत्वावधान में डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मुजफ्फरपुर प्रक्षेत्र द्वारा विभिन्न बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के लोगों की सेवार्थ व्यापक पैमाने पर राहत सामग्री जरूरतमंद लोगों तक पहुँचाई जा रही है। स्कूली छात्र–छात्राओं से एकत्रित एवं अन्य उदार–हृदय अभिभावकों से प्राप्त राहत–सामग्री का वितरण युद्ध स्तर पर जारी है। राहत सामग्री के तौर पर संग्रहीत बड़ी मात्रा में चूड़ा, गुड़, चावल, मोमबत्ती, माचिस, सत्तु, बिस्किटस, पावरोटी, मिल्कपाउडर, कपड़े, तैयार फूड पैकेट्स, भूंजा, लेखन सामग्री सहित अन्य आवश्यक वस्तुओं को कैरियर वाहन में भरकर बाढ़–प्रभावितों के आश्रय–स्थल एवं ग्रामीण क्षेत्रों में ऑन–द–स्पॉट डी.ए.वी. स्कूल के स्टाफ ने क्षेत्रीय निदेशक एवं प्राचार्यों के मार्गदर्शन में वितरित किया हैं।

नरकटियागंज में 250 साड़ियाँ वितरित की गईं। डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बरबरी, मुजफ्फरपुर ने जिले के औराई, कटरा, बंदरा प्रखंडों में 1000 परिवारों को कटरा प्रखंड स्थित बंसघट्टा, डूमरी, रामपुर, बरैठा, बंधुपरा, चंगेल, खंगूरा डीह गाँवों के 800 परिवारों को, NH- 77 पर रह रहें लगभग एक हजार परिवारों को सहायता सामग्री वितरित की गई।

डी.ए.वी. स्कूल, थावे, गोपालगंज द्वारा 3 गाँवों के 800 परिवारों डी.ए.वी. नरकटियागंज, प. चम्पारण द्वारा प्रथम दिन 400 परिवारों तथा दूसरे दिन 500 परिवारों को और फिर 400 परिवारों तक लाभार्थियों की सूची बनाकर राहत सामग्री उपलब्ध करायी गई। एन.एस. डूमरा, सीतामढ़ी द्वारा, 500 परिवारों को राहत सामग्री पहुचाई गई। सुदूर ग्रामीण परिवेश में स्थित डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, नरहां, पूर्वी चम्पारण, ने 500 बाढ़ पीड़ित परिवारों के बीच राहत सामग्री का वितरण किया। इस सहायता के लिए खुले आसमान के नीचे रह रहे बाढ़ पीड़ितों ने डी.ए.वी. का धन्यवाद ज्ञापित किया। मीडिया ने डी.ए.वी. द्वारा की जा रही सेवा की सराहना की है।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ७

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 10 सितम्बर 2017 से 16 सितम्बर 2017

जीवन-यज्ञ अविच्छिन्न रहे

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

घृतस्य जूतिः समना सदेवा, संवत्सरं हविषा वर्धयन्ती।
श्रोत्रं चक्षुः प्राणोऽच्छिन्नो नो अस्तु, अच्छिन्ना वयमायुषो वर्चसः।।

अथर्व 16.58.1

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **यज्ञः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**घृतस्य**) आत्मतेज–रूप घृत की (**जूतिः**) वेगवती धारा (**समना**) मन–सहित [और] (**सदेवा**) इन्द्रियों–सहित (**संवत्सरं**) शत–संवत्सर जीवन –यज्ञ को (**हविषा**) हवि से (**वर्धयन्ती**) बढ़ाती [रहे]। (**नः**) हमारा (**क्षोत्रं**) क्षोत्र, (**चक्षुः**) नेत्र [और] (**प्राणः**) प्राण (**अच्छिन्नः अस्तु**) अच्छिन्न रहे। (**वयं**) हम (**आयुष**) आयु से [तथा] (**वर्चसः**) वर्चस्विता से (**अच्छिन्नाः**) अच्छिन्न [रहें]।

● मनुष्य का जीवन सौ या सौ से भी अधिक वर्ष तक चलनेवाला एक यज्ञ है, जिसे 'शत–संवत्सर यज्ञ' भी कहा है जाता है। हम चाहते हैं कि हमारा यह यज्ञ निर्विघ्न चलता रहे। जैसे बाह्य यज्ञ तभी प्रवृत्त रह सकता है, जब उसमें यजमान और ऋत्विजों द्वारा निरन्तर हवि की आहुति पड़ती हे, वैसे ही हमारे इस शरीर यज्ञ के निर्बाध चलते रहने के लिए भी यह आवश्यक है कि इसका यजमान और इसके ऋत्विज् इसे हवि द्वारा बढ़ाते रहें। आत्मा ही इस का 'यजमान' है, मन 'ब्रह्म' है, प्राण 'उद्गाता' है, वाणी 'होता' है चक्षु 'अध्वर्यू' है। अतः आत्मा की आत्म–तेज–रूप घृत की आहुति, मन की प्रबल संकल्प की आहुति और सब ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रयों की अपनी–अपनी ज्ञान–कर्म–रूप हवियों की आहुति हमारे इस 'शत–संवत्सर' जीवन–यज्ञ में पड़ती रहनी चाहिए। यदि आत्मा, मन और इन्द्रिय–देव इस यज्ञ में सहायक नहीं होंगे, तो हमारा यह जीवन–यज्ञ समय पूर्व ही विच्छिन्न हो जाएगा। अतः हमारे क्षोत्र, नेत्र, प्राण आदि की शक्तियाँ प्रअक्षुण्ण रहनी चाहिएँ, जिससे हम चिर–काल तक कानों से शब्द, नेत्रों से रूप, नासिका से गन्ध, रसना से रस, त्वचा से स्पर्श का ग्रहण कर सकें और प्राण–अपना आदि की क्रियाओं को सम्यक् प्रकार से करते रहें। यदि हमारी ये इन्द्रियाँ दुर्बल, या अशक्त हो जाती हैं तो हमारे जीवन की वही अवस्था होगी, जो ऋत्विजों के दुर्बल, अशक्त या उदासीन हो जाने पर यज्ञ की होती है। यदि आयु से तथा वर्चस्विता से अच्छिन्न रहना चाहते हैं, तो हमें अपने जीवन–यज्ञ के यजमान और ऋत्विजों को सबल, सशक्त और निरन्तर जागरूक रखना होगा।

हे मेरे आत्मन्! हे मन! हे प्राण! हे इन्द्रिय–देवो! तुम जागते रहो, जीवन–यज्ञ में हवि डालते रहो, यज्ञ को प्रज्वलित, प्रवृद्ध, अच्छिन्न तथा वर्चस्वी बनाये रहो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत-पान

● महात्मा आनन्द स्वामी

विशाल नदी में दो नौकाओं का वर्णन करते हुए स्वामी जी ने कहा संसार को देखो और उससे लाभ उठाओ। इस पर तैरो और लोगों को इसके आर–पार पहुँचाओ, परन्तु संसार को अपने हृदय के अन्दर मत आने देना। संसार को कभी अवसर न दो कि वह आपके हृदय में, दिल में, छेद करे और उसके मार्ग से अन्दर प्रविष्ट हो।

दूसरी कथा में स्वामी जी कहा बहुत से लोग नर्क और स्वर्ग के विचार से उल्टी–सीधी पूजा में लगे रहते हैं। जो इन और ऐसी ही अन्य समस्त वस्तुओं के लिए हो रही है। क्या यह ईश्वर की पूजा है? भक्ति का साधारण–सा मूल्य माँगकर उसके गौरव को कम मत करो। यदि निःस्वार्थभाव से ईश्वर की पूजा होगी तो उसके फल भी महान् होंगे।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

जमींदार की दो लड़कियाँ

एक जमींदार की दो लड़कियाँ थीं। एक लड़की का विवाह किसान के साथ हुआ था और दूसरी लड़की एक कुम्हार के साथ विवाही गई थी। विवाह सम्पन्न हुए जब कुछ समय व्यतीत हो गया तब जमींदार की स्त्री ने कहा– "लड़कियों के सम्बन्ध में बहुत समय से कुछ नहीं सुना। उनकी अवस्था न जाने कैसी है? जाइए, जाकर लड़कियों का समाचार ले–आइए।"

जमींदार ने अगले ही दिन तैयारी की और लड़कियों के पास जा पहुँचा। पहले वह किसान के घर गया और लड़की से मिलकर कुशल–मङ्गल पूछा। लड़की ने कहा– "सब ठीकठाक है। खेत में बीज बोया हुआ है। आकाश में बादल भी छाए हुए हैं, परन्तु ये अब न बरसे तो हमारा कोई ठिकाना नहीं। पिछले वर्ष भी फ़सल नहीं हुई और यदि इस वर्ष भी सूखा पड़ गया तो फिर भूखों मरना पड़ेगा। पिताजी! कृपा करके वृष्टि होने के लिए प्रार्थना कीजिए, जिससे आपकी पुत्री को कष्ट न हो।"

अब जमींदार वहाँ से उठा। वह दूसरी लड़की के पास गया, जो उसी गाँव के दूसरी ओर कुम्हार के घर में रहती थी। जमींदार ने लड़की के घर में प्रविष्ट होते ही कहा– "कहो बच्ची! अच्छी तो हो। सुनाओ, क्या हाल है?"

लड़की बोली– "पिताजी! अच्छी हूँ। सब ठीक–ठाक है, कुशल से हूँ, परन्तु देखो तो सही ऊपर से ये कैसे काले–काले बादल आ गए हैं। आज के आवे में कच्चे बर्तन डाले थे और आज ही आग लगाई है। यदि यह वृष्टि हो गई तो हमारी कुशल नहीं। पहला आवा खराब हो गया था और अबकी बार बादल बरसा तो फिर भूखा ही मरना पड़ेगा। अब मिन्नतें माँग रही हूँ कि बादल न बरसे। आप भी प्रार्थना कीजिए की वृष्टि न हो और आपकी बेटी सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करे।"

जमींदार अब अपने घर की ओर चला। जब घर पहुँचा तो उसकी पत्नी ने पूछा– "कहो! देख आए लड़कियों को? अच्छी तो हैं? बड़े उदास से दिखाई देते हो? क्यों कुशल तो है?"

जमींदार– हाँ, कुशल ही है, परन्तु एक बात है।

स्त्री– क्या, वह भी बताओ।

जमींदार– बस, यही कि एक अवश्य उजड़ेगी। इसके पश्चात् जमींदार ने विस्तार से बतलाया कि यदि वृष्टि हुई तो कुम्हार के घरवाली और यदि वर्षा न हुई तो किसान के घरवाली उजड़ेगी। दोनों का कुशलता से रहना कठिन है, क्योंकि एक की आबादी (बसने) से दूसरे की बरबादी है और एक की बरबादी से दूसरी की आबादी है।

यह एक मनोहर कहानी है, जो बड़ी सुन्दरता से इस बात को प्रकट करती है कि जो लोग दो नावों पर पाँव रखकर पार उतरना चाहते हैं, वे गलती पर हैं। मनुष्य का मन एक ही ओर जाकर या तो मानव–जीवन को दुःखरूप बना देता है या सुखरूप कर देता है।

अन्तःकरण एक जाट है। उसकी दो लड़कियाँ वे दो वृत्तियाँ है, जो पुण्य की ओर और पाप की ओर ले जाती हैं। यदि अन्तःकरण दोनों वृत्तियों को बढ़ने देता है, तो वह आपत्ति में फँस जाएगा और दोनों उसे अपने प्रयोजन के लिए प्रयुक्त करने का प्रयत्न करेंगी, परन्तु यदि अन्तःकरण पुण्य की वृत्ति को ही बढ़ाएगा और पाप की वृत्ति को रोक देगा तो अन्तःकरण आनन्दित रहेगा और उसके किसी प्रकार की घबराहट का सामना नहीं करना पड़ेगा। बस, एक ओर हो जाओ। किंकर्तव्यविमूढ़ता में मत रहो। यह कहते हुए कि इस बार पाप की वृत्ति को बढ़ लेने दो, फिर पुण्य की वृत्ति को बढ़ा लेंगे। आप स्वयं नष्ट–भ्रष्ट हो जाएँगे। पाप की वृत्ति को तुरन्त रोक दो। इसी प्रकार से आपका अन्तःकरण शुद्ध होगा और आप सुखी हो जाएँगे।

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

ईश्वर की वाणी

● गंगा प्रसाद उपाध्याय

ईश्वरीय वाणी– ईश्वर की वाणी किसको कहते हैं? ईश्वरीय वाणी उस पवित्र पुस्तक का नाम जिसमें परमात्मा की ओर से मनुष्य के लिए उपदेश हों। परमात्मा कहाँ है? प्रभु सर्वत्र है। वह कण–कण में ओत–प्रोत है। वह प्रत्येक वस्तु के भीतर है। वह प्रत्येक प्राणी के भीतर है। वह प्रभु मुझमें है। आपमें हैं। कौन सा ऐसा मनुष्य है, कौन सा ऐसा पक्षी, कौन–सा ऐसा पशु है जिसके भीतर भगवान् न हो! परमात्मा सर्वव्यापक है। वह सर्वद्रष्टा है। प्रत्येक वस्तु से उसकी सत्ता का प्रकाश होता है।

वह कण–कण में छुपा है और कण–कण में व्यक्त हो रहा है,

उस ज्योतिस्वरूप पर, जो अव्यक्त है, प्रकाश का पर्दा है।

बात दूर वाले से

यदि ऐसी बात है तो परमात्मा की वाणी का क्या अर्थ हुआ? हम उससे बात करते हैं जो हमसे दूर होता है। जो समीप होता है उससे धीरे–धीरे बात करते हैं। जो दूर होता है उससे चिल्लाकर बात करते हैं, और जो अति दूर होता है उससे दूरभाष से बात करते हैं। तार देते हैं, पत्र लिखते हैं। परमात्मा हमारे हृदयों में विराजमान है तो उसको बात करने की क्या आवश्यकता है? क्या परमेश्वर हमसे बहुत दूर रहता है?

ऐसा नहीं। परमात्मा का कोई कुटुम्ब, वंश अथवा मित्र–बंधुओं का टोला नहीं, जिससे वह किसी विशेष भाषा में बातचीत किया करता हो। इसलिए यह समझना कि परमात्मा किसी विशेष स्थान से, किसी विशेष साधन से हमसे बातचीत करता है, यह परमात्मा का निरादर है, कुफ्र है– नास्तिकता है। प्रभु इन सब बंधनों से मुक्त है। जैसे प्रकाश की किरणें किसी गन्दी वस्तु पर पड़कर भी गन्दी नहीं होतीं, इसी प्रकार ईश्वर भी प्रत्येक वस्तु में व्यापक होते हुए भी ससीम वस्तुओं की कैद (बंधन) से सर्वथा मुक्त है बंधनरहित है।

मनुष्य मनुष्य से दूर होता है

परन्तु वाणी की आवश्यकता मानव को है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से दूर होता है। वह चाहता है कि अपने विचार दूसरों पर प्रकट करे। माता बालक को गोदी में लिये रहती है तथापि माँ के हृदय व बच्चे के हृदय में दूरी होती है। माता कुछ ऐसे शब्द अपनी वाणी से निकालती है जिससे बालक यह समझ ले कि माँ क्या चाहती है। बालक को जब भूख लगती है तो वह वाणी से चिल्लाता है ताकि उसकी माता सुन सके। इसी प्रकार आप दूसरे उदाहरण ले सकते हैं। इसलिए परमात्मा की ओर से प्रत्येक व्यक्ति को दो विशेष वस्तुएँ दी गई हैं– बोलने को वाणी और सुनने के लिए कान। मैं जिस शब्द को वाणी से बोलता है उसको आप कान से सुनते हैं। बात एक है। बोलने वाले के लिए यह वाणी से निकली हुई वस्तु है और सुनने वाले के लिए यह कान से प्राप्त हुई वस्तु है।

शब्द–अर्थ का सम्बन्ध

अतः यद्यपि परमात्मा के लिए वाणी की आवश्यकता नहीं, परन्तु मनुष्य के लिए ईश्वरीय वाणी का अर्थ है वे उपदेश जो परमात्मा ने वाणी के द्वारा बोलने व कान के द्वारा सुनने के लिए दिए हैं। वाणी के तीन भाग हैं। उपदेश के–ज्ञान के तीन भाग हैं: वाणी से निकले हुए शब्द, वे पदार्थ, जिनके लिए वे शब्द प्रयुक्त किए गए, और उन पदार्थों व शब्दों का ज्ञान की दृष्टि से सम्बन्ध। एक उदाहरण से समझिए। जल एक शब्द है। फारसी में इसको 'आब' कहते हैं। अरबी में 'मार' कहते हैं। संस्कृत में इसको 'जल' कहते हैं। ये सब शब्द हैं, परन्तु इन शब्दों का एक अर्थ है 'पा' अर्थात् वह वस्तु जिसको हम पीते हैं। उस वस्तु में जिसको पिया जाता है और उस शब्द में जिसको बोला जाता है एक इल्मी (ज्ञान का) सम्बन्ध है आपने कहा, ''पानी लाओ''। आपकी वाणी से शब्द पानी निकला। वह पानी नहीं है। पानी का नाम है यदि मुझमें ज्ञान है तो मैं समझकर आपको पानी ला दूँगा, परन्तु यदि आपकी भाषा नहीं जानता तो आपकी आज्ञा का पालन न कर सकूँगा। यदि आपके शरीर में वाणी और मेरे शरीर में कान नहीं होते तो न आप अपने विचार प्रकट कर सकते और न मैं सुन सकता। अतः परमात्मा ने मेरी आवश्यकताओं और आपकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर मनुष्य को बोलने की शक्ति दी और उसके लिए दो यन्त्र भी दिए अर्थात् वाणी व कान। पशुओं को भी वाणी व कान दिए और उनको भी बोलने की शक्ति दी, परन्तु उनकी योग्यता की दृष्टि से उनकी बोलने की शक्ति अपूर्ण है। कारण? उनका सम्पूर्ण शरीर ही मानव–देह की तुलना में अपूर्ण व दोषयुक्त है। कुत्ता केवल भौंक सकता है और आपके मुख से निकाले गए शब्दों का कुछ–कुछ अर्थ समझ सकता है, परन्तु मनुष्य के समान पूरा–पूरा नहीं।

परमात्मा अपना ज्ञान कैसे देता है

परमात्मा मनुष्य को अपना कलाम (ईश्वरीय वाणी) कैसे देता है? वह सर्वत्र है और उसे सदा बोलने की आवश्यकता नहीं। हाँ, अल्पबुद्धि, अल्पज्ञ व अल्पशक्ति मनुष्य के परस्पर के काम चलाने के लिए भाषा की आवश्यकता है। जैसे प्रभु ने हमें आँखें दीं और आँख में देखने की शक्ति दी और आँख की सहायता के लिए सूर्य बनाया, उसी प्रकार परमात्मा ने वाणी दी और कान दिए और वाणी व कान के प्रयोग के लिए मन व मस्तिष्क बनाया और उनकी सहायता के लिए ज्ञान दिया। यह ज्ञान बाहर से नहीं दिया गया न कहीं दूर से भेजा गया, न उसके लिए किसी पत्रवाहक/संदेशवाहक की आवश्यकता पड़ी। परमात्मा ने सृष्टि के आदि में ऋषियों के हृदयों में ज्ञान का प्रकाश किया। परमात्मा उनके हृदयों में था। ऋग्वेद के दसवें मण्डल के 71 सूक्त में बताया है कि परमात्मा ऋषियों के दिलों में ज्ञान का प्रकाश करता है अर्थात् उनके हृदयों को एक ऐसी शक्ति प्रदान करता है कि वे शब्दों और उनके अर्थों को ठीक–ठाक समझ सकें तथा अपने से थोड़ी बुद्धि रखने वाले लोगों को अपनी वाणी व कानों के द्वारा ज्ञान दे सकें। वे सबसे पहले होते हैं। उनका गुरु परमात्मा होता है। वह मानवीय गुरुओं के समान वाणी व कान की सहायता नहीं लेता। 'दिल रा ब दिल राह अस्त'– हृदय हृदय की बात जान लेता है। ऋषि लोग इस ज्ञान को दूसरों को देते हैं और फिर गुरु–शिष्य–परम्परा चल पड़ती है।

ईश्वरीय ज्ञान का प्रकाश कब?

ईश्वरीय ज्ञान कब नाज़िल (उतरता) होता है? नाज़िल शब्द हमारे भाव को समझाने के लिए उपयुक्त नहीं है। यदि परमात्मा ऊपर होता और हम नीचे होते तो वह ऊपर से किसी साधन से हम तक अपना कलाम (ज्ञान) सुनाता। नाज़िल के बजाय संस्कृत का प्रकाश शब्द अधिक उपयुक्त है। इसके लिए अरबी का शब्द इनकशाफ़, बजाय नाज़िल के अधिक अच्छा है। परमात्मा पहले आँख बनाकर बाहर से देखने की शक्ति नहीं डालता प्रत्युत भीतर से ज्योतिरहित तत्त्व को ज्योतित कर देता है। परमात्मा के कार्य बाह्य नहीं होते। इख़राज (निकास) और इद्खाल (प्रवेश) दोनों शब्द मात्र आरज़ी (अस्थायी) हैं। प्रभु अपने इस ज्ञान का प्रकाश सृष्टि के आदि में करता है। यदि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में परमेश्वर ही ज्ञान का प्रकाश सृष्टि के आदि में करता है। यदि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में परमेश्वर ही ज्ञान का प्रकाश करता तो गुरु–शिष्य अथवा सीखने–सीखाने की परम्परा सदा ही न चलती है। यह संसार के व्यवहार में सर्वथा विपरीत होता। न अध्यापक होते न स्कूल होते। न मक्तब (पाठशालाएँ) होते, न पाठ (वाज़), उपदेश होते और न (वाइज़) उपदेशक। ऐसे संसार की तो कल्पना करना भी कठिन है। परमात्मा के नियम बदलते नहीं (कुरान में यही आता है)।

जब मार्गदर्शन के लिए कुछ नहीं था

हम आर्यसमाजी लोग वेद को ईश्वरीय वाणी कहते हैं अर्थात् वेद वह वाणी है जिसका परमात्मा ने ऋषियों के हृदयों में उस समय प्रकाश किया जब मनुष्य उत्पन्न ही हुआ था और उसके मार्गदर्शन के लिए कुछ भी नहीं था। ऋषियों को उपदेश–आदेश हुआ कि वेदों का उपदेश दूसरों को निरन्तर करते रहें। वेदों का प्रचार तभी से आज तक निरन्तर चला आता है।

क्या वेद को कोई जानता है?

आज तो वेदों को कोई जानता नहीं, फिर आर्यसमाज का यह दावा ठीक नहीं प्रतीत होता। इसका आपके पास क्या उत्तर है?

मनुष्य ईश्वरीय देन को विकृत करता है

तनिक सोचिए! वेदों का अध्ययन कीजिए तथा संसार की अन्य–अन्य पुस्तकों को पढ़िए। आपको ज्ञात होगा कि दीन अथवा धर्म की जो वास्तविक बातें हैं वे सब वेदों में दी हुई हैं और अन्य–अन्य पुस्तकों व भाषाओं में उनका विकृत रूप है। परमात्मा की बनाई जो वस्तु मनुष्य के प्रयोग में आती है उसमें कुछ न कुछ मिलावट अथवा बिगाड़ हो जाता है। हम शुद्ध जल पीते हैं परन्तु हमारे शरीर में से वही स्वच्छ जल दुर्गंधयुक्त होकर निकलता है। प्रभु ने ऑक्सीजन–हाइड्रोजन से शुद्ध जल बनाया। मनुष्य ने प्रयोग किया तो उसके पेट अथवा स्नानागार में जाकर वह मैला हो गया। इस मैले जल में स्वच्छ जल के अंश ऑक्सीजन और हाइड्रोजन ठीक उसी अनुपात में विद्यमान हैं परन्तु, बाह्य वस्तुओं ने बाहर से प्रविष्ट होकर जल को प्रदूषित कर दिया है। इसी प्रकार वेदों की भाषा और वेदों के विचार करोड़ों

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

वेद के प्रादुर्भाव की कहानी-5

● भद्रसेन

ओम् येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।। अथर्व. 3,30,4

शब्दार्थ–

वः तुम्हारे गृहे– घर में, आवास स्थलों, ग्रामों, नगरों में पुरुषेभ्यः– जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्णता चाहने वालों के लिए तत्–उस सर्वप्रसिद्ध, सर्वपरिचित ब्रह्म– (लाभ, प्रभाव की दृष्टि से जो) महान् है ऐसे वेद ज्ञान को, जो कि संज्ञानम्– सम्यक् ज्ञान है, जिसमें भ्रम, संशय, भय, विपरीत ज्ञान नहीं है। ऐसे सुनिश्चित संज्ञान को ऐसे विशेषणयुक्त ब्रह्म को कृण्मः– करते हैं, देते हैं, सामने लाते हैं। येन– जिस ज्ञान, प्रेरणा के प्रभाव से, व्यवहार में लाने से देवाः– समझदार, ऊंचा उठने की चाहना वाले न वियन्ति– उल्टे रास्ते पर नहीं जाते, सदा सीधे–सच्चे कार्य ही करते हैं च– और मिथः–परस्पर, एक–दुसरे सामाजिक सदस्य से, मित्र से, भाई–बहन आदि रिश्ते वालों से न–उ– विद्विषते–किसी भी ढंग से द्वेष–हानि पहुँचाने का कार्य नहीं करते, किसी की हानि, नुकसान पर प्रसन्न नहीं होते।

व्याख्या–

पुरुषेभ्यः– सारे मनुष्य भौतिक, बौद्धिक आदि क्षेत्रों में प्रगति चाहते हैं, पूर्ण होना चाहते हैं। अतः उनको पुरुष नाम से पुकारा जाता है। यह पूर्ण प्रगति जिस साधन से होती है, उसी को मन्त्र में ब्रह्म, संज्ञान, संज्ञानं ब्रह्म कहा है। यह ईश्वर का सुनिश्चित ज्ञान है। ईश्वर का रचा यह प्रत्यक्ष संसार अपनी एक–एक रचना के द्वारा बता रहा है, कि यह सकल गुण सम्पन्न कलाकार की अनोखी कला है। जैसे कि कहा जाता है– पत्ता–पत्ता तेरा पता दे रहा है। अतः इन वायु, सूर्य, जल आदि प्राकृतिक पदार्थों से सिद्ध होता है, कि इस संसार का रचनाकार, व्यवस्थापक, नियामक हर तरह से पूर्ण सर्वज्ञ, शक्तिमान, सर्वव्यापक आदि गुणयुक्त है। अतः उस का ज्ञान भी प्रत्येक प्रकार से पूर्ण है। तभी तो कहा गया है 'वेद कहें इक बात' अर्थात् वेद सुनिश्चित, स्पष्ट बात कहते हैं। वे भ्रम, संशय, मिथ्याचारी बात नहीं करते।

येन देवा न वियन्ति– ऐसे वेद ज्ञान की शिक्षाओं से जो शिक्षित हो जाते हैं। इन प्रेरणाओं को अपने जीवन में जो अपना लेते हैं। वे फिर सदा सर्वत्र सही राह पर ही चलते हैं। वे स्वार्थ, लोभवश, नासमझी करके भी उलटी राह पर नहीं चलते। औरों की बात ही क्या? एक चोरी करने वाला भी दिल से यही चाहता है, कि कोई भी, कभी भी, कहीं भी मेरी चीज की चोरी, छीना–झपटी न करे। अतः चोरी छीना–झपटी स्पष्ट रूप से उल्टा कर्म है। पुनरपि स्वार्थ और लोभ के कारण व्यक्ति आज अनेक प्रकार से चोरी जैसे उल्टे कर्म कर रहे हैं।

कहीं दुकानदार उचित भाव, सही भार, उचित माल की चोरी कर रहा है। तो कहीं कार्यालय के कर्मचारी टाल–मटोल, समय–श्रम बचाने की चोरी कर रहे हैं। कहीं विविध उद्योगों में मलिक (मा–लीक) धन बचाने, कम वेतन देने, अधिक काम लेने के उपाय वर्त रहे हैं। तो दूसरी ओर मजदूर, नौकर (नो–कर) वर्ग काम से बचने, माल को इधर–उधर करने आदि के रूप में चोरी करते हैं। हर एक अपने–अपने ढंग से स्वार्थपूर्ति में ही जुटा हुआ है।

मन्त्र में मुख्य रूप से दूसरी बुराई– नो च विद्विषते मिथः – के रूप में द्वेष– परस्पर जलन, हानि पहुँचाने या दूसरे के नुकसान से खुश होने की है या इनके कारण तू–तू, मैं–मैं से शुरू होकर लड़ाई–झगड़े के रूप में सामने आती है। कहीं मानसिक, वाचिक, रूप में जलन से यह सब हो रहा है, तो कहीं व्यवहारिक रूप से शरीर के अंगों से और कभी अनेक तरह के हथियारों से झगड़ों का जाल फैला हुआ दिखाई देता है।

सारी सामाजिक बुराइयों को यहाँ दो रूपों में चित्रित किया गया है। विविध न्यायालयों में सारे अभियोग अधिकतर इन दोनों कारणों से ही सामने आ रहे हैं। मन्त्र बड़े विश्वास से कह रहा है, कि ये सारा विवाद, बुराईयों वेद ज्ञान से शिक्षित होने पर, अपनाने पर, समझे हुए में नहीं होती। हाँ, अधूरा, कोरे शब्द ही गुँजाने वाला 'थोथा चना बाजे घना' की कहावत को चरितार्थ करता है। हाँ, अनेक स्वयं न चाहते हुए भी अपनी ओर से कुछ न करने पर भी विवाद में व्यर्थ घसीट लिए जाते हैं। ऐसी स्थिति में एक पक्ष का द्वेष वहाँ कारण होता है। दूसरा पक्ष सामाजिकता के कारण कष्ट उठाता है।

वेद ने ईर्ष्या–द्वेष को जंगल की आग से उपमा दी है। जैसे यह आगे से आगे फैलती, बढ़ती है। आप तो जलती ही है, पर अपने साथ दूसरे को भी जलाती है। (अथर्व–7,45,2)

मन्त्र इन शब्दों से प्रेरणा, सन्देश दे रहा है, कि जैसे प्रकाश से अन्धकार दूर हो जाता है। ऐसे ही वेदाज्ञान से सर्वविध अन्धविश्वास, अन्धेर दूर हो जाता है। जैसे हमारी आँखे बाहर प्रकाश की सहायता से अपना कार्य करती हैं। ऐसे ही हमारी अन्दर की बुद्धिरूपी आँख भी ज्ञान रूपी आन्तरिक प्रकाश से अपनी सोच को उभारने में समर्थ होती है। यह ज्ञान वेद के माध्यम से ही पहले–पहल संसार में सामने आया।

विशेष– मूलतः यह मन्त्र पारिवारिक वर्णन का है। अतएव संज्ञान पारिवारिक दृष्टि से जो सांझा हित है, संयुक्त बातें हैं। उस सामूहिक ब्रह्म–महान् रहस्य को सामने लाया जा रहा है। अतः पारिवारिक दृष्टि से कृण्मः उत्तम पुरुष बहुवचन हैं। जिससे परिवार का सांझा संकल्प सामने आ रहा है। मनुस्मृति, गीता में ब्रह्म शब्द वेद के लिए भी आया है। वेद ने आ वदानि, अभिमन्त्रये के रूप में उत्तम पुरुष एकवचन का अपने सम्बन्ध में प्रयोग किया है।

तत् ब्रह्म– (पहले–पहल ज्ञान कैसे–

आज तो यह नियम निर्बाध रूप से चल रहा है, कि हर एक अपने सिखाने वाले से सीखता है। पर जब भी संसार शुरू हुआ, तब आज की तरह पढ़ाने वाले नहीं थे। अतः सोचने वाली बात यह है, कि तब पढ़ाई कैसे प्रारम्भ हुई? उस समय केवल संसार को बनाने वाला ही विद्या का ज्ञाता था। आज की तरह और कोई विकल्प न होने से ईश्वर ने ही संसार सर्जन के सदृश ज्ञान भी दिया इसी लिए जितने भी ईश्वर को मानने वाले आस्तिक हैं। वे सभी एक स्वर से यह मानते हैं, कि संसार के सूर्य आदि समान ज्ञान का प्रारम्भ भी ईश्वर ने ही किया है। इसी लिए सभी आस्तिक अपने धर्मग्रन्थ को ईश्वर का ज्ञान, देन मानते हैं।

हाँ, ईश्वर ने सूर्य आदि भौतिक पदार्थ सारे के सारे संसार के प्रारम्भ में बनाए है। इसीलिए ये सारे समान रूप से सभी को प्राप्त हो रहे हैं। वेद ने इसीलिए इन प्राकृतिक पदार्थों के लिए जहां प्रथमज का प्रयोग किया है, वहां वेद के लिए भी अनेक बार प्रथमज शब्द का प्रयोग किया है। अर्थात् ये सारे संसार के शुरू में पैदा हुए हैं।

182 शालीमार नगर, होशियारपुर
पंजाब 146001

☞ पृष्ठ 03 का शेष

ईश्वर की वाणी....

वर्षों से मानवीय समूहों–जातियों की अपनी दुर्बलताओं के कारण जो क्रमशः बिगड़ते चले आते हैं उसके कारण संसार के मजहबों (Religions) व विचारों में भी भेद हो गया।

मूलभूत और सार्वभौमिक नित्य सत्य वही हैं

उसूली (सैद्धान्तिक) व असली (वास्तविक) सच्चाइयों में कोई अन्तर नहीं आया। जैसे पुरानी पुस्तकों से ऊँचे सिद्धान्त लेकर नए लेखक स्वयं अपने को प्रसिद्ध कर देते हैं ताकि उनकी धाक जनमानस पर जम जाए, इसी प्रकार बहुत–से विद्वानों व उपदेशकों ने उन्हीं प्राचीन ग्रन्थों से उन सच्चाइयों को लेकर नवीन पुस्तकें रच दीं और स्वयं को उनका रचयिता प्रसिद्ध कर दिया। गंगा नदी में वास्तविक जल तो गंगोत्री से ही आता है, परन्तु नीचे उतरते–उतरते दूषित हो जाता है। एक उदाहरण देता हूँ। यजुर्वेद में आता है कि जो परमात्मा को हर दिल में और हर दिल को परमात्मा में विद्यमान समझता है, वह कभी कष्ट नहीं पाता। वेद की यह शिक्षा परमात्मा की सत्ता को प्रत्येक पदार्थ में व्यापक बताती है। यह एक सैद्धान्तिक सत्य है। लोगों ने भूल से यह समझ लिया कि परमात्मा कहीं आकाशस्थ है, अतः जब उसको परमात्मा से कुछ माँगना होता है तो आकाश की ओर हाथ करके खुदा को पुकारता है। खुदा के न्यारे–न्यारे घर कल्पित कर लिए गए है। यह सब मानवीय अज्ञान का फल है। वेदों के स्वाध्याय से ये बातें स्पष्ट हो जाती है।

आर्यसमाज की स्थापना वेद–प्रचार के लिए की

ऋषि दयानन्द ने वेदों के स्वाध्याय, उपदेश व प्रचार के लिए आर्यसमाज को स्थापित किया और लोगों से कहा कि तुम मेरी बात मत मानो, वेद की बात मानो। मैं कोई नवीन पुस्तक अथवा नवीन ज्ञान नहीं लाया। जिस प्राचीन ज्ञान को– वाणी को लोग भूल गए हैं, और भूल–भूलैयों में पड़ गए हैं, उनको फिर से प्रसारित करना चाहिए। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। उनका पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना प्रत्येक आर्य का परम धर्म है।

गंगा ज्ञान सागर से साभार

युवको! क्या तुम्हारे सब काम सत्य पर आश्रित हैं?

● श्री गजानन्द आर्य

पुत्रो! आज मैं तुम्हें उन बंधनों से मुक्त करता हूँ, जिनके अनुसार गुरुकुल में चलना तुम्हारे लिए आवश्यक था। पर यह न समझना कि अब तुम्हारे लिए कोई बंधन नहीं हैं। प्राचीन काल से हमारे ऋषियों ने बहुत बंधन बाँध रखे हैं, उन्हें मैं आज तुम्हें सुनाना चाहता हूँ। इन बंधनों के पालन करने में किसी का तुम पर दवाब नहीं, इसीलिए ये बंधन और भी कड़े हैं। ये बंधन उन उपनिषद् वाक्यों में वर्णित हैं, जिन्हें आज से हज़ारों वर्ष पहले इसी पवित्र भूमि में प्रत्येक आचार्य अपने स्नातकों को विद्या समाप्ति के समय सुनाया करता था। उन्हीं पुराने आचार्यों का प्रतिनिधि होकर मैं तुम्हें वे वाक्य सुनाता हूँ।

पुत्रो! परमात्मा सत्यस्वरूप है। उनका प्यारा बनने के लिए अपने जीवन को सत्यस्वरूप बनाओ। तुम्हारे मन में, तुम्हारी वाणी में और तुम्हारी क्रिया में सत्य हो। धर्म–मर्यादा का उल्लंघन मत करो। इस मर्यादा का साक्षी अन्तःकरण ही है। बाहर से कोई धर्म बतलाने वाला नहीं है। जो हृदय परमात्मा का आसन है, वह तुम्हें धर्म की मर्यादा बतलाएगा। अपनी आत्मा की वाणी को सुनो और उसके अनुसार चलो। स्वाध्याय से कभी मुख न मोड़ो। वह तुम्हें प्रमाद से बचाएगा। जिस आचार्य ने तुम्हारी इतने दिनों तक रक्षा की, उसके प्रति तुम्हारा जो कर्त्तव्य है उसे अपने हृदय से पूछो। यह तुम्हारा आचार्य है, मैं नहीं जानता कि तुम इसे क्या दक्षिणा देना चाहते हो, मैं तुमसे केवल एक ही दक्षिणा माँगता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा ऐसा कोई काम न हो जिससे तुम्हें अपनी आत्मा और परमात्मा के सामने लज्जित होना पड़े।

तुम में से अब कई गृहस्थ में प्रवेश करेंगे। उनसे मैं यह कहता हूँ कि पाँचों यज्ञों के करने में कभी प्रमाद न करना। माता, पिता, आचार्य और अतिथि ये तुम्हारे देवता हैं, इनकी सदा सुश्रुषा करना धर्म समझो।

पुराने ऋषि बड़े उदार और निरभिमानी थे। वे कभी पूर्णतया दोषरहित होने का दावा नहीं करते थे। उन्हीं का प्रतिनिधि होकर मैं तुम्हें कहता हूँ कि हमारे अच्छे गुणों का अनुकरण करो और दोषों को छोड़ दो। इस संसार की अंधियारी में किसी को अपना ज्योति–स्तम्भ बनाओ। पढ़ा–पढ़ाया कुछ अंश तक पथ–प्रदर्शक होता है, पर सच्चे पथ–प्रदर्शक वे ही महापुरुष होते हैं, जो अपना नाम संसार में छोड़ जाते हैं। वे जीवन–समुद्र में ज्योति–स्तम्भ का काम देते हैं। ऐसे आत्मत्यागी, सत्यवादी और पक्षपातरहित महापुरुषों के पथ पर चलो, चाहे वे जीवित हों या ऐतिहासिक।

लेना तो सभी संसार जानता है। तुम इस योग्य हो कि अपनी बुद्धि और विद्या में से कुछ दे सको। जो तुम्हारे पास है, उसे उदारता से फैलाओ। हाथ खुला रखो, मुट्ठी को बन्द न होने दो। जो सरोवर भरता है वह फैलता है, यह स्वाभाविक नियम है।

जिस भूमि की मिट्टी से तुम्हारी देह बनी है, जिसकी गंगा का तुमने निर्मल जल पिया है और जिसके गौरव के सामने संसार का कोई देश ठहर नहीं सकता, उस पवित्र भूमि भारत में रहते हुए तुम उसके यश को उज्ज्वल करोगे, इसकी मुझे पूरी आशा है। इसके साथ ही जिस सरस्वती की कोख में तुमने दूसरा जन्म लिया है, उसे मत भूलना। किसी भी काम को करते हुए सावित्री माता की उपासना से विमुख न होना।

यह मैंने संक्षेप में उन वाक्यों का सारांश सुना दिया है, जोकि सहस्रों वर्षों से इस पवित्र भूमि में गूँजते रहे हैं। इन्हें गुरु मन्त्र समझो और अपना पथ–दर्शक बनाओ। इसके अतिरिक्त मेरा भी तुम्हारे साथ कई वर्षों का संबंध रहा है। मैं तुमसे गुरुदक्षिणा नहीं माँगता। गुरु दक्षिणा देना तुम्हारा धर्म है, माँगना मेरा धर्म नहीं है। मैं तुमसे यह भी नहीं पूछता कि तुम्हारे राजनैतिक, सामाजिक या मानसिक विचार क्या–क्या हैं? मैं केवल तुमसे यही पूछता हूँ कि तुम्हारे सब काम सत्य पर आश्रित हैं या नहीं। स्मरण रखो, यह संसार सत्य पर आश्रित है। इसके बिना समाज के नियम पद दलित करने योग्य हैं। यदि सत्य तुम्हारे जीवन का अवलम्बन है, तो मुझे न कोई चिन्ता है और न ही कुछ माँगना है।

पुत्रो! आज मुझे कितनी प्रसन्नता है, तुम उसका अनुभव नहीं कर सकते। मुझे अपने जीवन में जिस बात को देखने की आशा नहीं थी, उसे मैंने देख लिया। यदि आज मेरे प्राण भी चलने को तैयार हों, तो मैं खुशी से उन्हें आज्ञा दे सकता हूँ। इस आनन्द का कारण मैं बताना निरर्थक समझता हूँ। तुममें से प्रत्येक उसे अनुभव कर रहा है। लोग समझा करते थे कि हम दिमागों को परतन्त्र बनाना चाहते हैं, परन्तु अब लोग देख रहे हैं कि यदि कोई ऐसा स्थान है जहाँ परतन्त्रता रुक नहीं सकती, तो वह यही स्थान है। मेरा अपने ब्रह्मचारियों को केवल एक ही उपदेश है– मत देखो कि लोग तुम्हें क्या कहते हैं, सत्य को दृढ़ता से पकड़ो। सारे संसार का सत्य ही आधार है। यदि तुम्हारा मन, वचन और कर्म सत्यमय है, तो समझो कि तुम्हरा उद्देश्य पूरा हो गया।

प्रसिद्धि के पीछे भाग कर कोई काम मत करो। प्रसिद्धि के पीछे भागने से किसी की प्रसिद्धि नहीं हुई। अपने सामने एक उद्देश्य रख लो, उसी में लग जाओ, फिर गिरावट असम्भव है।

उपदेशक बनो या मत बनो, पर एक बात याद रखो, बनावटी मत बनो। सबको परमात्मा वाणी की शक्ति या उपदेश देने की शक्ति नहीं देता। वाणी न हो, न सही, किन्तु आचरण सत्यमय हो। नट न बनो, न इस संसार को नाट्यशाला बनाओ। स्वतन्त्र जीवन रखो। यदि इस प्रकार का स्नातकों का आचरण होगा, तो तुझे पूर्ण सन्तोष होगा।

श्री गजानन्द आर्य अभिनन्दन ग्रन्थ से साभार

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

अमृत–पान ...

गुप्त रहस्य

सुन्दर मनोहारी बद्रिकाश्रम में सनत्कुमार आदि चारों ऋषि अभी आकर ठहरे ही थे कि उन्होंने नारदमुनि को चकित, दुःखी और चिन्ता में मग्न देखा।

नारदमुनि और चकित हो। सचमुच यह आश्चर्य की बात थी। सनत्कुमार आगे बढ़े। नारद को पुकारा– नारद! यह क्या अवस्था बनी हुई है? किसलिए दुःखी हो रहे हो?

नारदमुनि ने कहा– "क्या पूछते हो? क्या दुनिया का रंग आपसे छिपा हुआ है। क्या आप नहीं जानते कि संसार में न सत्य रहा है, न तप रहा है, न कहीं दान है। यदि है भी तो सर्वथा उलटा, जिससे लाभ के स्थान पर हानि हो रही है। सभी मनुष्य आलसी, मूर्ख और नाना प्रकार के रोगों से पीड़िता हो रहे हैं। चहुँ ओर हाहाकार मचा हुआ है।"

मैंने देखा है और मेरी आँखों ने खून के आँसू बहाए हैं कि 'भक्ति' अपमानित और अनादृत हो रही है। भक्ति की ओर कोई ध्यान ही नहीं देता। यदि भक्ति कहीं दिखाई देती भी है तो वह केवल बाह्य टीप–टाप, झूठ और धोखा है। फिर और अन्याय देखिए कि भक्ति के प्रिय पुत्र ज्ञान और वैराग्य तो सर्वथा नष्ट हो गए हैं। ज्ञान और वैराग्य जो भक्ति के अत्यन्त आवश्यक अंग हैं, किसी के भी हृदय में दृष्टिगोचर नहीं होते। ज्ञान और वैराग्य के बिना शुष्क भक्ति व्यर्थ और निकम्मी है। तुलसीदास जी ने कैसी सुन्दरता से इस रहस्य को प्रकट किया है–

रैन का भूषण इन्दु है, दिवस का भूषण भानु।
दास का भूषण भक्ति है, भक्ति का भूषण ज्ञान।।
ज्ञान का भूषण ध्यान है, ध्यान का भूषण त्याग।
त्याग का भूषण शान्तिपद, तुलसी अमल अदाग।।

हे सच्चे ऋषियों! मेरा हृदय इस समय दुःख और चिन्ता से भरपूर है। संसार की ऐसी पीड़ित अवस्था देखी नहीं जा सकती। मैं चाहता हूँ संसार में सच्ची भक्ति का प्रचार हो। लोग ईश्वर के सच्चे भक्त बनें। इसी चिन्ता में मैं चारों दिशाओं में घूम आया हूँ, परन्तु किसी ने भी तो मेरे हृदय को शान्ति नहीं दी। कोई भी मेरा सहायक सिद्ध नहीं हुआ। कहो ऋषियों! क्या आप भी मुझे निराश रखेंगे अथवा मुझे बताएँगे कि कौन–से सत्कर्म हैं, जिनसे भक्ति बढ़ सकती है।

ऋषियों ने नारदमुनि के इस प्रभावशाली प्रवचन को सुना। सनत्कुमार ने आगे बढ़कर नारदमुनि को हृदय से लगा लिया। धन्य नारदमुनि, धन्य हो जिसे भक्ति का इतना ध्यान है। सुनो! आज हम तुम्हें भगवान् को प्राप्त कराने वाली भक्ति का उपदेश करते हैं। जिससे न केवल भक्ति, ज्ञान और वैराग्य पूर्णरूप से प्राप्त होते हैं, प्रत्युत मुक्ति जैसा मीठा फल भी प्राप्त होता है।

हे नारद! जिसे द्रव्य आदि से किया जाए, वह 'द्रव्ययज्ञ' कहलाता है। जो ध्यान आदि द्वारा किया जाए, उसे 'ध्यानयज्ञ' कहते हैं और जिसे अग्निहोम की विधि से करते (शास्त्रार्थ के द्वारा ज्ञान को बढ़ाते) हैं, उसे 'ज्ञानयज्ञ' कहते हैं। ये समस्त यज्ञ कर्म के अनुसार (जैसा–जैसा किसी ने यज्ञ किया, उसी के अनुसार) स्वर्गादि फल देने वाले हैं। ऐसे श्रेष्ठ यज्ञों में केवल स्वर्ग ही मिलता है, मोक्ष नहीं।

फिर कौन ऐसा सत्कर्म है जो शेष रह गया है। सुनो नारद! मोक्ष–प्राप्ति की बुद्धि होकर, उसके द्वारा जो परमेश्वर की पूजा की जाती है, उसे ही विद्वान लोग भक्ति कहते हैं, प्रश्न अभी मध्य में ही है कि वह मोक्ष–प्राप्ति की बुद्धि कहाँ से आए? इसके लिए विद्वानों ने कहा है कि **वेदाध्ययन के द्वारा स्वाध्याययज्ञ** करते हुए ऐसी बुद्धि प्राप्त होती है।"

हे नारद! यही सत्य कर्म है। यही स्वाध्याययज्ञ करते–करते तुम्हें सत्य कर्मों का ज्ञान हो जाएगा। भक्ति की बुद्धि स्वाध्याय से पैदा होती है। ज्ञान स्वाध्याय से उत्पन्न होता है। भक्ति सच्चे हृदय से हो तो ज्ञान के नेत्र खुल जाते हैं। यदि ज्ञान के नेत्र शास्त्र के अनुकूल खुल गए हैं तो वैराग्य का आनन्द प्राप्त होता है और यदि मन में पूर्ण रूप से वैराग्य उदय हो गया है तो मोक्ष की प्राप्ति होती है।

यही उपदेश है। इसी का लोगों में प्रचार करो। लोगों को स्वाध्याय की ओर लगाओ, फिर वे स्वयमेव ईश्वर के भक्त बन जाएँगे।

.... क्रमशः

शब्दकोष के चार शब्दों का साक्षात्कार

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

यह साक्षात्कार (इंटरव्यू) है, शब्द कोश के उन चार शब्दों का जो उन चार व्यक्तियों के वाचक या प्रतिनिधि हैं जो शिक्षा जगत् में शिक्षा प्रसार का कार्य करते हैं। विचारणीय यह है कि हम जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं कहीं वे अपनी पकड़ या पहचान तो नहीं खो रहे हैं, अपनी विशेषता या गरिमा को तो नहीं गवाँ रहे? उदाहरण के तौर पर सीलन के कारण यदि सीमेंट अपनी पकड़ को खो बैठे तो क्या वह दो ईंटों को जोड़ पाएगा? यदि गोंद अपनी चिपकाने की शक्ति या पकड़ को छोड़ दे तो क्या वह दो पन्नों को जोड़ पाएगा? इसी प्रकार प्राचीन काल में जिस भाव, तात्पर्य या अर्थवत्ता को ध्यान में रख कर शब्दों की रचना हुई थी, क्या वे शब्द आज भी उसी भाव के संवाहक हैं? इसी बात को ध्यान में रखकर हमने शब्द कोश के चार शब्द अध्यापक, शिक्षक, गुरु और आचार्य को साक्षात्कार के लिए आमंत्रित किया है और उनसे प्रार्थना भी की है कि वे शब्द होने पर भी चेतन मनुष्य के रूप में अपनी बात कहें। भले ही चारों शब्द पर्यायवाची हैं फिर भी देखना यह है कि एक जैसे दिखने वाले चार मनुष्यों की तरह वे एक जैसी बात कहते हैं या अलग–अलग। हम चाहते हैं कि इस साक्षात्कार (इंटरव्यू) में आप भी सम्मिलित हों।

मैंने सेवक से साक्षात्कार के लिए अध्यापक शब्द को भेजने के लिए कहा। थोड़ी देर में वह शब्द उपस्थित हो गया।

"आपका नाम?" मैंने देखते ही उससे पूछा।

"जी, मुझे अध्यापक शब्द कहते हैं।"

" आपका कुछ अर्थ भी होगा?"

"सर, अध्यापक शब्द का अर्थ है–'अध्यापयति इति अध्यापकः' अर्थात् जो अध्यापन का कार्य करता हो, उसे अध्यापक कहते हैं।

"अध्यापक का काम पढ़ाना ही है या और कुछ भी?

"जैसा मेरा नाम है वैसा ही मेरा काम भी है। मैं पढ़ाने के सिवाय और कोई काम नहीं कर सकता।"

"यदि आपको पढ़ाने के साथ समाज सेवा या राष्ट्र निर्माण का कार्य भी सौंप दिया जाए तो क्या उसे नहीं करेंगे?"

"जी, बिल्कुल नहीं। एक अध्यापक अपने बच्चों का पेट पाल ले, यही बहुत बड़ी बात है। इस मँहगाई के जमाने में ट्यूशन से ही फुर्सत नहीं, राष्ट्र निर्माण की बात सोचना मूर्खता है।"

"अच्छा, अब आप जा सकते हैं। (अध्यापक का प्रस्थान) (शिक्षक शब्द का प्रवेश)

"नमस्ते सर!" (शिक्षक शब्द ने हाथ जोड़कर धीरे से कहा।)

"आपका नाम?" मैंने भी धीरे से पूछा।

" 'शिक्षक' यही शब्द मेरी पहचान है।"

"इस शब्द में ऐसी कौन सी बात छिपी हुई है कि आप को शिक्षक कहा जाए।"

"इस शब्द में 'शिक्षा' शब्द व्याप्त है। जो शिक्षा प्रदान करता है उसे शिक्षक कहते हैं।"

"आप कौन सी शिक्षा पर विश्वास करते हैं भौतिक या आध्यात्मिक?"

"दोनों पर। पर आध्यात्मिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देता हूँ क्योंकि शिक्षा ही संस्कारों की जननी है।"

"क्या राष्ट्र निर्माण में भी एक शिक्षक की प्रमुख भूमिका हो सकती है?"

" यह तो शिक्षक की प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। यदि वह चाहे तो राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है और न चाहे तो स्वार्थ पूर्ति तक ही सीमित रह सकता है।"

"क्या कारण है कि आजकल शिक्षकों का वह सम्मान नहीं है जो होना चाहिए?"

"सर, मैं आपकी बात से सहमत नहीं हूँ। हमारा समाज में सम्मान है तभी तो 'शिक्षक दिवस' मनाया जाता है और अध्यापक सम्मानित किए जाते हैं।"

"अच्छा, आप जा सकते है।"

"थैंक्यू सर!" (शिक्षक शब्द का प्रस्थान 'गुरु' का प्रवेश) (प्रवेश करने पर)

"क्या नाम है आपका?" मैंने गुरु शब्द से प्रश्न किया।

"मुझे 'गुरु' शब्द से सम्बोधित किया जाता है।"

"क्या अभिप्राय है इस शब्द का?"

"गुरु शब्द का सामान्य अर्थ होता है–भारी बोझ। उदाहरण के तौर पर – महर्षि दयानन्द के कंधों पर राष्ट्र निर्माण का गुरुत्तर भार था।"

"इस शब्द का व्युत्पत्ति परक अर्थ क्या होगा?"

संस्कृत में 'गुः' अक्षर का अर्थ होता है अन्धकार और 'रु' अक्षर का अर्थ होता है – रोकना। समग्र अर्थ होता है, जो शिष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को हटा कर ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाए उसे 'गुरु' कहते हैं।"

"क्या प्राचीन साहित्य में 'गुरु' शब्द का प्रयोग हुआ है?"

"जी, सर। एक स्थान पर नहीं, अनेक स्थानों पर इस शब्द का प्रयोग हुआ है। जैसे गुरुर्ब्रहमा गुरु विष्णुः। इसी शब्द की महिमा को ध्यान में रखकर गुरुकुलों की स्थापना की गई। यदि गुरु विरजानन्द न होते तो क्या महर्षि दयानन्द जैसा व्यक्तित्व उभर कर आता। चाहे मर्यादा पुरुषोत्तम राम हों या योगीराज कृष्ण, सभी के व्यक्तित्व निर्माण में गुरुओं की भूमिका रही है।"

"क्या आपको नहीं लगता कि आजकल 'गुरु' शब्द का अवमूल्यन हो रहा है, उसकी महत्ता कम हो रही है?"

"सर, आप ठीक ही फरमा रहे हैं। कुछ अज्ञानी, मूर्ख या ना समझ इस शब्द का दुरुपयोग कर रहे हैं और 'गुरुघंटाल' जैसे शब्दों का प्रयोग कर रहे हैं। कई बार तो शहर के सबसे गुंडे के लिए 'गुरु' नाम से सम्बोधित करते हैं। यह चिन्ता का विषय है।"

"वर्तमान सन्दर्भ में आप गुरु की भूमिका के बारे में क्या कहना चाहेंगे?"

"समाज के निर्माण में गुरु की प्रमुख भूमिका होती है क्योंकि वह छात्र–छात्राओं के सबसे निकट रहता है। वह चाहे तो नई पीढ़ी को उन्नति के चरम शिखर पर ले जा सकता है। जिस दिन गुरु अपनी भूमिका को भूल जाएगा, उस दिन राष्ट्र का विकास भी अवरुद्ध हो जाएगा।"

"धन्यवाद, अब आप जा सकते हैं।"

"थैंक्यू सर।"

(गुरु शब्द का प्रस्थान तथा आचार्य शब्द का प्रवेश)

"क्या आप अपना नाम बताएँगे?" मैंने नवागन्तुक से पूछा।

"महोदय, आचार्य शब्द ही मेरी शोभा है। शिक्षक, अध्यापक, गुरु आदि के सन्दर्भ में भी मेरा प्रयोग होता है।"

"आपकी वेशभूषा तो दूसरों से भिन्न है, ऐसा क्यों?"

"यही तो मेरा आचार्यत्व है।"

"आचार्य शब्द तो बड़ा विचित्र है। इस शब्द में तो पढ़ाने या शिक्षा देने जैसी बात दिखाई नही देती।"

"यह भी मेरी विशेषता है। जो दिखाई नहीं देता, वहाँ भी मैं हूँ। जैसे चिड़िया एक–एक दाने को चुग कर अपने बच्चों के मुँह में डालती है वैसे ही आचार्य भी शब्दों के अर्थों के दानों को चुगकर अपने शिष्य के हृदय में डालता है। इसी कारण कहा जाता है– आचिनोति अर्थान् इति आचार्यः।"

"बहुत सुन्दर परिभाषा दी आपने। क्या इस शब्द के बारे में और कुछ कहना चाहेंगे आप?"

"जी, आचार्य शब्दों के माध्यम से शिष्य को जो अर्थ या संदेश देता है वह भी आचार या चरित्र के मधु से सिक्त या सिंचित रहता है। इसीलिए आचार्य की दूसरी परिभाषा दी गई है– आचार ग्रहपति इति आचार्यः।"

"ऐसे महान आचार्य को आप किस श्रेणी में रखना चाहेंगे?"

"महोदय, ऐसे आचार्य को देवों की श्रेणी में रखा गया है – आचार्य देवो भव।"

"गुरुकुलीय परम्परा में आचार्य की क्या भूमिका होती है?"

आचार्य की ही भूमिका होती है गुरुकुल में। आचार्य के बिना गुरुकुल की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आचार्य ही शिष्य का उपनयन संस्कार करता है उसे दीक्षा प्रदान करता है। इसलिए मनुस्मृति में कहा गया है– सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्य प्रचक्षते।"

"बहुत अच्छा, अब आप जा सकते हैं। बहुत जल्दी हम साक्षात्कार का परिणाम घोषित कर देंगे।"

"महोदय, यदि आप नाराज न हों तो मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ।"

"तो क्या तुम मेरा इंटरव्यू लोगे?" मैंने आश्चर्य पूर्वक पूछा।

"नहीं, मेरा ऐसा अभिप्राय नहीं था, मैं तो यह पूछना चाहता था कि आपने हम चार शब्दों का तो इण्टरव्यू ले लिया लेकिन जो व्यक्ति इन शब्दों की ढाल बनाकर या इन शब्दों को ओढ़ कर शिक्षण संस्थाओं में पढ़ाने जाते हैं, उनका इंटरव्यू आपने क्यों नहीं लिया?"

"उनका इंटरव्यू तो हमेशा ही लिया जाता है लेकिन उनके वाचक या द्योतक आपका इंटरव्यू पहली बार लिया गया है, यही इस इंटरव्यू की ख़ासियत है। दरअसल मैं यह देखना चाहता था कि वर्तमान संदर्भ में भी शब्दों में अर्थों की पकड़ है या नहीं? कहीं वे अपनी चमक या धार को गँवा तो नहीं बैठे। मुझे इस बात का भी भय है कि कहीं टीचर, मास्टर, उस्ताद जैसे शब्द विद्यार्थियों को न लुभाने लग जाएँ। गुरु, आचार्य जैसे शब्द तो भारतीय संस्कृति के शृंगार हैं।

"महोदय, क्या आप साक्षात्कार के परिणाम का कुछ संकेत देने का कष्ट करेंगे?"

"हाँ, आप जा सकते हैं। आपकी नियुक्ति सुनिश्चित है। आप ही तो आर्य संस्कृति की शोभा हैं।" इतना कहकर मैंने राहत की साँस ली।

"बहुत–बहुत धन्यवाद" कहकर आचार्य प्रवर ने भी अपने घर की राह पकड़ी।

230 आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

शुद्धिकरण में महात्मा हंसराज जी का योगदान

● सन्तोष आर्य

सन् 1923 में आगरा के आसपास के गाँवो में जो मलकाना राजपूतों की शुद्धि होनी थी, उसमें बहुत सारी कठिनाइयाँ आ रही थीं। महात्मा हंसराज शुद्धि सभा के उपप्रधान थे। शुद्धि से पूर्व मूलराजपूतों और मुस्लिम राजपूतों में हुक्का पानी जोड़ने के सम्बन्ध में बड़ा व्यवधान उपस्थित हुआ। दोनों अपनी-अपनी बात पर अड़े हुए थे। महात्मा हंसराज जी ने दोनों ओर के कार्यकर्त्ताओं को समझा बुझाकर मेल मिलाप करवाया, तब जाकर इतने बड़े पैमाने पर शुद्धि समारंभ हो गया। मैनुपरी (उ.प्र.) के आसपास के गाँवों में भी इसी तरह के शुद्धि कार्यक्रम आयोजित किए गए। महात्मा जी गाँव-गाँव घूमकर शुद्धि संस्कार कराते, उनकी अड़चनें दूर करते। नाराज़गी और रूठे हुओं को मनाते तथा संस्कार के लिए उन्हें राजी करते। शुद्धि के बाद बड़े-बड़े भोजन दिए जाते, महात्माजी स्वयं उन भोजों की व्यवस्था करवाते। संयुक्त प्रान्त के इन प्रदेशों में महात्मा हंसराज अपने कार्यकर्त्ताओ के साथ कड़ी धूप में इन गाँवों में शुद्धि के लिए घूमते रहते थे। महात्मा जी शुद्धि के कार्यक्रम में इतने तन्मय हो गए थे कि उन्हें भूख प्यास और अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान न रहता। दोपहर के समय कड़ी धूप में गाँवो के लिए पैदल निकलते। जहाँ कहीं से शुद्धि के लिए कोई सूचना आती, तो कोसो दूर पैदल ही निकल पड़ते। **इस तरह तीन महीनों के निरन्तर संघर्ष से आपने लगभग 147 गाँवों को शुद्ध किया। सन् 1923 के अन्त तक एक वर्ष में लगभग ढाई लाख हिन्दुओं को शुद्ध करने का अभूतपूर्व कार्य आपने स्वामी श्रद्धानन्द जी के साथ मिलकर किया।**

सन् 1923 में महात्माजी के मार्गदर्शन में और डी.ए.वी. कार्यकर्ताओं के सहयोग से शिमला के पादरी मिस्टर स्टोक्स को शुद्धकर वैदिक धर्म में दीक्षित किया गया। यह पादरी अमेरिका से आकर कोर्टखाई से नारकंडा तक ईसाई मत का प्रचार करता था। अशिक्षित हिन्दुओं को क्रिश्चियन बनाता था। वह डी.ए.वी. के कार्यों से प्रभावित होकर तथा आर्यसाहित्य पढ़कर शुद्ध वैदिकधर्मी बन गया। स्वामी श्रद्धानन्दजी के शब्दों में शुद्धि अभियान की कहानी सुनिए – "25 फरवरी 1923 ई. को मलकाना का प्रथम जत्था शुद्ध किया गया। ये मलकान "ग्राण्ड ट्रक रोड" पर स्थित "रैभा गाँव के थे, जो आगरा से 13 मील दूरी पर है। यह मेरा भाग्य था कि अकस्मात् मुझे पहली बार उन तथाकथित मुस्लिम राजपूतों के सच्चे हिन्दू घरों को देखने का सौभाग्य मिला और उनके रहन सहन की हिन्दू पद्धति मेरे हृदय पर अंकित हो गयी। बाहर से आए हुए हजारों अभ्यागतों की उपस्थिति में मलकानों को उनके हिन्दू भाइयों ने पुनः हिन्दू जाति में ले लिया और इन अभ्यागतों ने शुद्ध किए मलकानों द्वारा तैयार भोजन भी ग्रहण किया। मेरे सामने यह तथ्य पुनः मूर्तरूप में खड़ा हो गया कि ये वही वीर और शुद्ध आत्माएँ हैं, जिन्हें शताब्दियों तक जाति बहिष्कृत किया गया था, और आज उन्हीं आत्माओं से प्रायश्चित कराया जा रहा है। उसी दिन सायंकाल एक और गाँव कुठाली के मलकान शुद्ध किए गए। सन् 1923 के अन्त तक इसी प्रकार कई और गाँव शुद्ध किए गए, और हजारों तथाकथित नौ (नव) हिन्दूधर्म में वापस ले लिए गए।

"भारतीय हिन्दू शुद्धिसभा" के द्वारा सिर्फ नौ (नव) मुस्लिमों को ही हिन्दुधर्म में धर्मान्तरित नहीं किया गया प्रत्युत 60 हज़ार के करीब अस्पृश्य हिन्दुओं को मुस्लिम होने से बचाया भी गया। (आर्य समाज की उपलब्धियाँ, लेखक-दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, प्रकाशक- सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा नई दिल्ली पृष्ठ 271) उन्हें समाज में बराबरी का दर्ज़ा देकर अस्पृश्यता का कलंक धोने का प्रयास किया गया। **इस कार्यक्रम में आर्य समाज ने आगे बढ़कर अपनी भूमिका निभायी। शुद्धि सभा द्वारा ई. सन् 1923 से 1931 तक इन आठ वर्षों में 127 शुद्धि सम्मेलन किए गए। 156 पंचायतें की गयीं, 81 के लगभग सर्वजाति सहभोज किए गए। सभा के द्वारा पूरे हिन्दुस्तान में नवमुस्लिमों को फिर से वैदिक हिन्दुधर्म में लाने का अभियान चलाया गया। सन् 1951 से 1954 तक स्वामी स्वतन्त्रतानन्द शुद्धिसभा के प्रधान रहे। उनके नेतृत्व में लेखराम नगर के समीप उल्ला नामक ग्राम के 350 ईसाइयों ने वैदिकधर्म में प्रवेश कर हिन्दुधर्म को अपना लिया।** इस कारण पंजाब में शुद्धि आन्दोलन को बल मिला। शुद्धि आन्दोलन के अभियान को चलाने के लिए जो धन की आवश्यकता होती, उसकी पूर्ति के लिए पंडित देवप्रकाशजी लगातार योगदान देते रहे। जिससे कार्य सुकर होता चला गया। स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रादुर्भाव से पूर्व मुस्लिम धर्मान्तरितों के लिए हिन्दू समाज के दरवाजे हमेशा के लिए बन्द हो गए थे वे "भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा" के द्वारा पूरी तरह से खोल दिए गए।

शुद्धि सभा के उद्देश्य –

13 फरवरी 1923 को स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज जी की उपस्थिति में सभा की स्थापना हुई तब केवल एक ही उद्देश्य था कि मलकानों की घर वापसी (शुद्धि) की जाए और उन्हें धर्म का अंग बनालिया जाए, किन्तु जब दिसम्बर 1923 में सभा की रजिस्ट्री की गई तो उसके अनुसार निम्न उद्देश्य स्वीकृत किए गए।

क) हिन्दू समाज से बिछुडे हुए तथा अन्य मतावलम्बी भाइयों को पुनः हिन्दू समाज में सम्मिलित करना।
ख) शुद्धि-क्षेत्र में प्रेम तथा धर्म का प्रसार करना।
ग) पाठशालाओं तथा अन्य शिक्षाप्रद संस्थाओं द्वारा शुद्धि क्षेत्र में विद्यादि का प्रचार करना।
घ) आवश्यकतानुसार शुद्धि-क्षेत्र में चिकित्सालय खोलना।
ङ) धार्मिक-ऐतिहासिक तथा अन्य पुस्तकें जो सभा के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हों, छपवाना।
छ) सभा के उद्देश्यों की पूर्त्यर्थ अन्य आवश्यक साधनों को काम में लाना।

सभा की रजिस्ट्री –

इस सभा की रजिस्ट्री, रजिस्ट्रेशन एक्ट 21, 4 दिसम्बर सन् 1923 को हो चुकी है।

मुख्य कार्यालय –

भारतीय हिन्दू शुद्धिसभा का मुख्य कार्यालय 13 फरवरी सन् 1923 ई. से तारीख 18 मार्च 1925 ई. तक आगरा में रहा। 20 फरवरी सन् 1925 ई. के मथुरा अधिवेशन के प्रस्तावानुसार 19 मार्च सन् 1925 से केसरगंज लखनऊ में राजा साहब महवा की कोठी में चला गया। वहाँ एक वर्ष रहने के पश्चात् 14 मार्च 1926ई. को बृहद् अधिवेशन देहली के निश्चयानुसार 22 मार्च देहली में परिवर्तित हो गया वर्तमान समय में यह कार्यालय श्री जुगलकिशोर बिडलाजी द्वारा प्रदत्तभवन में जो बिरला मिल्स पुरानी सब्जी मंडी, दिल्ली 7 के सम्मुख स्थित है।

सभा का मुखपत्र "शुद्धिसमाचार"

यह मुखपत्र हिन्दी भाषा में फरवरी सन् 1925 से प्रकाशित किया जा रहा है। यह पत्र हिन्दी के साथ साथ बंगला, गुजराती भाषा में भी निकलता रहा। अब इस समय यह पत्र दिल्ली से निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। इस समय इसके लगभग 14 हज़ार ग्राहक हैं।

कार्य विवरण –

सभाद्वारा अपने जन्मकाल 1923 से 1931ई. तक जो कार्य किए हैं वे निम्नलिखित हैं :–

1) सभाद्वारा 13 फरवरी 1923 ई. से मार्च 1939 तक इन आठ वर्षों में 1 लाख 83 हज़ार 342 विधर्मी बने हिन्दू भाइयों को शुद्धकर पुनः हिन्दू जाति में शामिल किया गया।
2) इन वर्षों के बीच 1451 महिलाओं और 3155 अनाथों की रक्षा की।
3) आठ हज़ार (8000) के लगभग दलितों को विधर्मी होने से बचाया।
4) 127 शुद्धि सम्मेलन किए गए।
5) 156 पंचायतें कराई गयीं।
6) 81 बड़े सहभोज किए गए।
7) शुद्धि क्षेत्र में अनेक पाठशालाएँ तथा औषधालय खोले गए।
8) शुद्धि क्षेत्र में दर्जनों कुएँ तथा मंदिर बनाए गए।

अखिल भारतीय श्रद्धानन्द शुद्धि सभा –

स्वामी श्रद्धानन्दजी द्वारा शुद्धि आन्दोलन को वटवृक्ष का रूप दिए जाने के पश्चात् 23 दिसम्बर 1926 को धर्मवेदी पर उनका बलिदान होना भारतवर्ष की एक असामान्य एवं दुखद घटना थी। उनके द्वारा प्रतिपादित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आर्यवीरों ने ई. स. 1931 में "अखिल भारतीय श्रद्धानन्द शुद्धि सभा" की स्थापना की। इस सभा के अध्यक्ष तिर्वा नरेश राजा दुर्गानारायण सिंह तथा मंत्री कुंवर चाँदकरण शारदा अजमेर निर्वाचित हुए। शुद्धिसभा ने अपना आन्दोलन सुचारु रूप से प्रारम्भ रखा। जहाँ कहीं भी धर्मान्तरण की घटनाएँ होतीं वहाँ त्वरित कार्यवाही की जाती। **शुद्धि सभाद्वारा इन आठ वर्षों के भीतर 6153 धर्मान्तरित हिन्दुओं को शुद्ध किया गया। 192 स्त्रियों 205 अनाथों की रक्षा तथा निवास की व्यवस्था की गयी। उसी के साथ प्रतिबन्धात्मक रूप से 7500 दलितों को विधर्मी होने से बचाया।** (आर्य समाज की उपलब्धियाँ, लेखक-दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, प्रकाशक- सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा नई दिल्ली पृष्ठ 273)

मुस्लिमलीग और अन्य मजहबी संस्थाओं द्वारा हिन्दुओं के किए जा रहे धर्मान्तरण पर रोक लगाने का कार्य आर्य समाज ने जागरूकता के साथ किया। स्वातन्त्र्य पूर्वकाल में तबलीगी कार्य बड़ी तीव्रता और पागलपन के साथ किया जाता था, जो स्वतन्त्रता के बाद उसकी तीव्रता अब कम हो गयी है। अब उसके लिए दूसरे रास्ते अख्तियार किए जा रहे हैं, जैसे लवजिहाद, धन का लालच, हिंदूधर्म विरोधी पम्प्लेट आदि बाँटकर हिन्दुओं को अपनी ओर आकृष्ट करना आदि। आर्य समाज एवं हिन्दू संगठन इन सभी का प्रत्युत्तर दे रहे हैं, और शुद्धि सभाएँ भी अपने कार्यों में कोई कोताही नहीं बरत रहीं हैं।

शुद्धि आन्दोलन और मुस्लिम विद्वानों की घर वापसी से साभार

महर्षि गर्ग ने शरीर को बताया रथ

● शिवनारायण उपाध्याय

कठोपनिषद् में शरीर को एक रथ का रूप दिया गया है।

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिन्तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।। कठ.उप.3.3

अर्थ– (आत्मानम्) आत्मा को (रथिनम्) रथी, सवार (विद्धि), जान (तु) और (शरीरम् एव) शरीर को ही (रथम्) रथ (जान) (तु) और बुद्धि को (सारथिम्) सारथि (विद्धि) जान (च) और (मनः एक) मन को ही (प्रग्रहम्) लगाम जान।

इन्द्रियाणि हयानाः हुर्विषयां स्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनो युक्तं भोक्ते त्याहुर्मनीषिणः।।
कठ.उप. 3.4

अर्थ– (इन्द्रियाणि) इन्द्रियों को (हयान्) घोड़े (आहु) कहते है। (तेषु) उन (इन्द्रियों) में (विषयान्) शब्द, स्पर्श आदि को (गोचरान्) मार्ग (कहते हैं) (मनीषिणः) विचारशील पुरूष (आत्मा, इन्द्रिय, मनोयुक्तम्) इन्द्रिय और मन से युक्त आत्मा को (भोक्ता) भोगने वाला (इति आहुः) ऐसा कहते हैं। उपनिषद् में यह कल्पना ब्राह्मण ग्रन्थ से आई है। यह उपनिषद् यजुर्वेदीय कठ शाखान्तर्गत कठ ऋषि द्वारा प्रणीत है। ऋग्वेद मण्डल 6 सूक्त 47 में सर्व प्रथम शरीर को रथ की उपमा दी है। इस सूक्त के ऋषि गर्ग हैं तथा देवता इन्द्र है।

वरिष्ठे न इन्द्र वन्धुरे धा वहिष्ठयोः शतः वन्नश्वयोरा।
इषमा वक्षीषां वर्षिष्ठां मः नस्तारीनमघवन्नायो अर्यः।।

ऋ. 6.47.9

हे (इन्द्र) परमैश्वर्यशालिन् प्रभो। (नः) हमें (वरिष्ठे) विशाल (वन्धुरे) सुन्दर शरीर रथ में (धा) धारण कीजिए। हमारा शरीर रथ विशाल व सुन्दर हो। हे (शतावन्) सैंकड़ों धनों के धारण करने वाले प्रभो। (वहिष्ठयोः) उत्तमता से वहन करने वाले (अश्वयो) ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय रूप अश्वों में (आ) धारण करिए। हमारे ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रिय अश्व उत्तम हो। (इषां वर्षिणां इषम्) अन्नों में सर्वोत्तम अन्न को (आवक्षि) प्राप्त कराइए। हे (मघवन्) ऐश्वर्य शाली प्रभो। (नः) हमारे (रायः) एश्वर्यों को (अर्यः) स्वामी होते हुए आप (मा तारति) नष्ट न करें।

अर्थ– परमात्मा हमें विशाल और सुन्दर दृढ़ शरीर प्रदान करें। हमारे ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रिय घोड़े उत्तम हो। हमें उत्तम अन्न खाने को प्राप्त हो। हमारा एश्वर्य कभी नष्ट न हो। इस मंत्र में शरीर को रथ तथा इन्द्रियों को घोड़े बताया है। इन्द्रियों के विषय घोड़ों के मार्ग बनेंगे।

युजानो हरिता रथे भूरि त्वष्टेह राजति।
को विश्वाहा द्विषतः पक्ष आसत उतासीनेषु सूरिषु।।

ऋ. 6.47.19

अर्थ– (त्वष्टा) वे दीप्त (त्वृष्) व निर्माता (त्वक्ष) प्रभु। (इह) इस हमारे जीवन में (रथे) शरीर रथ में (हरिता) ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय रूपी अश्वों को (युजानः) युक्त करते हुए (भूरि राजति) खूब ही दीप्त होते हैं। इन इन्द्रियों में प्रभु की महिमा प्रकट हो रही है। (उत) और (आसीनेषु) उपासना में बैठे हुए (सुरिषु) इन स्तोताओं में (कः) वे अनिवर्चनीय प्रभु (विश्वाहा) सदा (द्विषतः पक्ष) शत्रुओं को पका डालने वाले के रूप में (आसने) स्थित होते हैं।

भावार्थ– परमात्मा ने इस शरीर रूपी रथ में इन्द्रिय रूपी अश्वों को जोता है। इससे उनकी महिमा प्रकट होती है। परमात्मा उपासकों के शत्रुओं का नाश कर देते हैं।

अगव्यूति क्षेत्रमागन्म देवा उर्वी सती भूमिरं हूरणाभूत।
वृहस्पते प्र चिकित्सा गविष्टावित्था सते जरित्र इन्द पन्थाम्।।

ऋ. 6.47.20

अर्थ– (देवाः) हे देवों। हम (क्षेत्र आ अगन्म) ऐसे शरीर रूप क्षेत्र में आ पहुँचे हैं जो (अगव्यूति) ज्ञान की वाणी रूप गौओं के प्रचार से रहित है जो केवल भोग प्रधान प्रतीत होता है। (उर्वी सती) विशाल होती हुई भी यह (भूमि) शरीर भूमि (अंहूरणा अभूत्) दास्यव भावों के रमण वाली हो गई है। हे (बृहस्पते) ज्ञान के स्वामिन् प्रभो। आप हमें (गविष्टौ) ज्ञान की वाणी रूप गौओं के अन्वेषण में (प्रचिकित्सा) उपाय का ज्ञान दीजिए। (इत्थासते) इस प्रकार (सते) होते हुए मेरे लिए दास्यक भावों के रमण का स्थान बने हुए मेरे लिए हे (इन्द्र) शत्रु संहारक प्रभो। (पन्थाम् मार्ग को (प्रचिकित्सा) प्रज्ञापित करिये।

भावार्थ– परमात्मा हमें सुगम मार्ग पर ले चले।

दश रथान्प्रष्टिमतः शतंगा अथर्वभ्यः।
अश्वथः पायवेऽदात्।। ऋ. 6.47.24

अर्थ– (अश्वथः) इन्द्रियाश्वों की रक्षा करने वाले प्रभो। (पायवे) विषय वासनाओं तथा रोगों से बचाव करने वाले उपासक के लिए (दश) दस (प्रष्टिमतः) इन्द्रियरूप अश्वों वाले (स्थान्) शरीर रथों को (अदात्) देते हैं। ये प्रभु (अथर्वभ्यः) अन्तर्दृष्टि वाले पुरूषों के लिए (शतम्) शत वर्ष पर्यन्त (गा) ज्ञान की वाणियों को प्रदान करते हैं।

भावार्थ–प्रभु ने हमें इन्द्रियरूपी दस अश्वों को दिया है। हमें इनका उचित उपयोग करना है, सत्य मार्ग पर चलाना है। प्रभु ने हमें जो ज्ञान की वाणी दी है उसका भी वर्षों तक उपयोग करना है।

वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः।
गोभिः सन्नद्धो असि वीडय स्वास्थाता ते जयतु जत्वानि।।

ऋ. 6.47.26

अर्थ–इस शरीर रूपी रथ को वनस्पते शब्द से सम्बोधित किया है अतः इसका पोषण वनस्पतियों द्वारा ही होना चाहिए। हे (वनस्पते) से बने हुए शरीर रथ। तू (हि) निश्चय से (वीड्वङ्ग) दृढ़ अंगो वाला (भूया) हो। तू (अस्मत् सखा) हमारा मित्र हो। (प्रतरणः) जीवनयात्रा में सब विघ्नों को पार करते हुए यात्रा की पूर्ति का साधन बन। (सुवीरः) तू उत्तम वीरता वाला हो। तू (गोभिः) इन्द्रियों से (सन्नद्धः) सम्यक् बद्ध (असि) है। (वीड्यस्व) तू शक्तिशाली कर्मों का करने वाला बन। (ते आस्थाता) तेरे पर अधिष्ठित यह जीव (जेत्यानि) जेतव्य शत्रुओं को (जयतु) जीतने वाला हो।

भावार्थ– इस ऋचा में शरीर रथ को सम्बोधित करते हुए कहा कि तू दृढ़ हो। हमारा (आत्मा का) मित्र हो। जीवन यात्रा में सब विघ्नों को पार कर हमें निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचा।

दिवस्पृथिव्याः पर्योज उद्वृतं वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रं हविषा रथं यज।।

ऋ. 6.47.27

अर्थ–हे जीव। (हविषा) दान पूर्वक अदन के द्वारा (रथं यज) तू शरीर रूपी रथ को अपने साथ संगत कर। यह शरीर रथ वह है जिसमें (दिवः परि) द्युलोक से (ओज उद्वतम्) ओजस्विता का भरण हुआ है। इस शरीर रथ में (वनस्पतिभ्यः) वनस्पतियों से (सहः) बल का (पर्याभृतम्) भरण हुआ है। इस शरीर रथ को तू अपने साथ संगत कर जो (अपां ओज्मानम्) वीर्य से ओज वाला है। जो (गोभिः) ज्ञानरश्मियों से (परि आवृतम्) आच्छादित है। (इन्द्रस्य वज्रम्) यह शरीर रथ इन्द्र का वज्र है।

भावार्थ – यह शरीर रथ सूर्य और चन्द्र की किरणों द्वारा ओजस्वी बनता है। यह ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ज्ञान रश्मियों से आच्छादित है। इसे हम अपने साथ संगत करें। इस शरीर रथ का उचित उपयोग होना चाहिए। अगली ऋचा इस विषय पर कहती है–

इन्द्रस्य वज्रो मरूतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरूणस्य नाभिः।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देवरथ प्रति हव्या गृभाय।।

ऋ. 6.47.28

अर्थ– यह शरीर रथ (इन्द्रस्य वज्रः) जितेन्द्रिय पुरुष का वज्र है, गति शीलता का साधन है। (मरूतां अनीकम्) प्राणों का इसमें बल हैं। (मित्रस्य गर्भः) स्नेहभाव को यह अपने अन्दर धारण करने वाला है। (वरूणस्य नाभिः) निर्द्वेषता को यह अपने में बाँधने वाला है। हे (देव रथ) ज्ञान किरणों से प्रकाशवान् (सः) वह तू (नः) हमारी (इमाम्) इस (हव्यदातिम्) द्रव्य को देने की क्रिया को (जुषाणः) प्रीति पूर्वक सेवन करता हुआ (हव्या) हव्य पदार्थों को (प्रतिगृभाय) ग्रहण करने वाला बन। दान पूर्वक अदन करने वाला बन।

भावार्थ– यह शरीर रथ जितेन्द्रिय पुरुष की गति शीलता का साधन बने। अपने अन्दर स्नेहभाव को धारण करे। निर्द्वेषता को धारण करे। ज्ञान किरणों से प्रकाशित रहे।

विशेष– महर्षि गर्ग वसुदेवजी के कुल गुरु थे। उन्होंने ही कृष्ण और बलराम को वेदाध्ययन के लिए संदीपन के पास भेजने की सलाह दी थी। श्री कृष्ण ने भी शरीर–रथ का वर्णन किया है। इतिशम्।

73, शास्त्री नगर दादाबाड़ी
कोटा (राजस्थान) 324009

वरिष्ठ नागरिकों के लिए शुभ सूचना

आयुधाम सोसायटी सीनियर सिटीजन होम नई दिल्ली जो पिछले 25 वर्षो से वृद्ध लोगों के लिए सेवा का कार्य कर रही है, आयुधाम सोसायटी में नवीन भवन निर्माण के माध्यम से वरिष्ठ नागरिकों के लिए आवासीय सुविधा का विस्तार किया गया है। आप सभी से अनुरोध है कि वरिष्ठ नागरिकों को रहने की जरूरत महसूस हो तो आप उन्हें यहाँ पर आने की प्रेरणा दें। अगर आप या आपके साथियों को भी रहने की आवश्यकता हो तो आपका भी स्वागत है। रजिस्ट्रैशन फार्म उपलब्ध है। सम्पर्क सूत्रः श्री अशोक आनन्द मो. नं. 9654783140 अथवा श्री आर.पी. रहेजा मो. न., 9717054558

The Beginning of Decay of Indian Culture

Pt. Bahadur Mal

Up to the end of the Gupta period, the Indian culture remained in its full bloom, expressing itself exuberantly in various ways; in the great work of philosophy, art, drama, literature, science and mathematics. It was during this period, that it overflowed into and enriched the cultures of countries to the North-East and South-East of India. But after the Gupta period, as we approach the end the first millennium A.D. we find a slackening of the pace, a drying up, as it were of the sources of creative thinking. We do not come across any great work of original thought in any department of literary and cultural activity, except perhaps in the domain of art. This was due to the influence and incentive provided by the foreign styles of art, brought into India by Muslim invaders. In the South of India, the growth of culture continued much longer. As the result of unsettled and chaotic conditions in North India, after the seventh century, many scholars and artists of the north migrated to the south, where they could carry on their work in a calm and undisturbed atmosphere.

This decay and arrest of growth were due to a number of factor, India was subbed to foreign domination, a number of times after the fall of the Mauryan dynasty. It regained its supremacy under the Gupta rule, and rose to great heights of splendour and power. But towards the end of the Gupta period, hordes of Huns entered India in successive waves of invasion. They were defeated ultimately by the combined armies of the last Gupta monarch and a ruler of Central India, Yasovarma by name. There oft-repeated and long-down-out conflicts made North India weak and disintegrated; so that the Muslim conquerors, who came next, did not meet any great resistance at the hands of the divide and smaller kingdoms of India. Political subjection, extending over a long period naturally led to cultural decay, especially when the rulers happened to be of narrow and bigoted mentality, making it difficult for the culture of the land to flourish unhindered. We find the process of rejuvenation reasserting itself in the British period, but in the Muslim period there was not much scope for the free expression of Indian genius in religious, philosophical and scientific fields. The problem of cultural and racial survival became the all-important problem of the age.

"Why should political freedom be lost unless some kind of decay has preceded it? It is really a matter of wonder, that a huge country like India, with its vast man-power should have succumbed to a handful of foreign invaders. Of course it is true, that nationalism is a recent development, even in the West. In India it is only in the British period, that the people began to think of themselves as a nation, and even after the country has become free, a great vigilance has to be kept against all fissiparous and anti-national tendencies in the form of casteism, provincialism and communalism. But, as a rule, there was no All-India feeling in old times, and kingdoms fell one after the other before the onslaught of tough invaders, without getting any assistance from neighbouring rulers.

But India had another source of weakness in its rigid and exclusive caste system. Even within the same State, it brought about a lack of cohesion. The caste system gave stability to society, but begot political weakness. The social sense developed in the direction of the family or the caste, and was altogether lacking in national consciousness, even within the borders of the same State. At the time of war only Ksatriyas fought. The rest of the people did not take part in fighting, or perhaps were not allowed to do so. "They were prepared to welcome any king or ruler or dynasty, Hindu or Muslim or Christian, provided they guaranteed ordered government and maintained the social liberty of each caste or community. That explains the facility, with which foreigners conquered our country, and the apparent passivity, with which most people accepted their rule.

But there was another way also, in which caste system played a part in bringing about cultural decay. As the result of caste system, more than eighty percent of people, who formed the lower classes, were denied all advantages of education, and opportunities of cultural growth and even among the higher classes the Ksatriyas and Vaisyas, as a rule, were not much concerned with the creation and dissemination of culture. It was only the small privileged class of *Brahmanas* who acted 'as the custodians of culture. Of course, there must have been a few- talented- and cultured people among the *Ksatriya* aristocracy, but the main contribution to cultural growth came from the Brahmana class.

To the ancient law-givers, it appeared the most natural thing, that each person should do the work to which he was born, in the interest of social stability. The result was most disastrous, in so far as the large majority of people at the bottom of the social ladder were concerned, who on account of the lack of education, could not make any contribution to the growth of culture and civilization. The Brahmana class, after the cultural effort of many centuries, was overcome by mental inertia and spiritual languor, as there was no impetus or competition forthcoming from the other classes. It is generally found, that a particular class, after a certain period, loses originality and the urge for creation, and gets into a condition of rut and formalism. At such a time, fresh vigour and creative effort are injected into society by the members of the hitherto uncreative classes. In a society, where there is no special restriction, whatsoever, on any member making his contribution to the fund of common culture the springs of originality and creativeness never dry up. In India the caste, system made it impossible for the largest class of people to do any creative work except that of creating children. There is no wonder, therefore, if after a time, the cultural achievements came to a standstill, and decay set in, in all departments of cultural life.

A third factor, which made for cultural decay was the degradation of the position of women during, this period. In the Vedic age and long after that, we find many distinguished ladies making rich contributions to culture. Some of them even composed the Vedic hymns, but when gradually early marriages were instituted, and the boon of education was taken away from women, they were naturally disabled from taking part in cultural efforts.

The child marriages, which became common during this period, also contributed very much to the decay of culture. In spite of the injunctions of the law-givers to the contrary, the parents, in the early centuries of the Christian era, went on marrying their daughters at the age of puberty. But by the end of the Gupta period, infant marriages became common. The result was, that boys and girls began to engage in sexual activity, as soon as, if not before they attained the age of puberty, girls in most cases becoming mothers at the age of twelve or thirteen years, and giving birth to weak and puny children.

This premature sexual activity naturally had a most pernicious influence on physical and mental health. In this connection, the findings of Dr. J. D. Unwin in his monumental work, *Sex and Culture* should be of the greatest interest. As the result of his extensive researches carried on among peoples at different levels of culture for many years, he arrived at certain conclusions which, in the light of the wealth of detail on which they are founded, many be regarded as practically certain and incontrovertible.

His most important conclusion is, that societies, which do not observe pre-nuptial chastity, and among whom opportunities for sexual indulgence are the greatest after marriage, are always found without any exhibition of physical or mental energy. "Neither mental nor social energy can be manifested", says Dr. Unwin "except under certain conditions. These conditions arise when sexual opportunity is reduced to a minimum." Even in the same society, the group or community in which the greatest restraint is imposed upon sex, always displays the greatest energy and dominates the other groups. Aggressiveness and energetic behaviour are the characteristics of those communities, in which there is a check on pre-nuptial sex indulgence and restriction on post-nuptial sexual opportunity by means of strict monogamy. "Some times," says Dr. Unwin "a man has been heard to declare, that he wants both to enjoy the advantages of high culture and to abolish compulsory continence. The inherent nature of human organism, however, seems to be such that these desires are incompatible, even contradictory. Any human society is free to choose, either to display great energy or to enjoy sexual freedom ; the evidence is, that it cannot do both for more than one generation."

Indian society, at a certain period of her history, chose in actual practice, the alternative of sexual freedom in the form of child marriage, and by permitting polygamy, which was practised by its influential and well-to-do members in an abundant measure. The result was, that within a century or so, the Indian society lost vigour and aggressiveness, which so characteristically distinguished the Indians of the Vedic age, and the succeeding centuries. The Hindus from the advent of the Muslim rule, right up to the modern period, came to bear the epithets of mild and peaceful. The mild Hindu was the product of sexual freedom, provided by the custom of early marriage. By all accounts, that have come down to us, the Vedic ancestors of the mild Hindus were not mild or mentally and physically lethargic.

There is no reason to doubt, in the light of the scientific findings of Dr. J. D. Unwin, that the institution of early marriages amongst Hindus an was important factor leading to an all-round decay in Indian society.

The condition of decay continued throughout the medieval period. In that period, a number of saints appeared on the Indian horizon, who preached sentimental devotionalism, and the doctrine of renunciation, as a sort of escape from the unhappy condition, brought about by the Muslim rule. We also find these saints, most probably under the influence of Islam, preaching against caste system and distinctions of high and low, and a number of other reforms, but their work did not appear to have any great influence on the established social structure, and so, when we come to the modern times, we find Hindu society more or less just as it was towards the end of the first millennium of Christian era.

—From A Story of Indian Culture

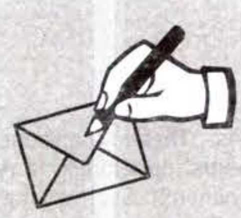

पत्र/कविता

आगे अभी और कठिन मार्ग है

तीन तलाक़ पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर जहाँ हज़ारों लाखों पीड़ित मुस्लिम महिलाएँ प्रसन्नता व्यक्त कर रही हैं और भविष्य में इस अन्यायी प्रथा से बचने वाली लाखों-करोड़ों मुस्लिम बालिकाएँ व युवतियाँ भी स्वयं को कुछ स्वतंत्र व सुरक्षित समझने का साहस कर रही है, वहीं कुछ मुस्लिम धर्म के कट्टरपंथी ठेकेदार मौलवी, उलेमा व मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के सदस्य आदि अपनी संकीर्ण मानसिकता के कारण इस निर्णय का विरोध कर रहे हैं।

कोई धमकी भरे अंदाज में कह रहा है कि शरिया में किसी को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं देश में लोकतंत्र है। धार्मिक आस्थाओं से खिलवाड़ नही होगा वरना यह बहुत मुश्किल हो जायेगा? अधिकांश उलेमाओं व कुछ मुस्लिम नेताओं ने भी कुछ ऐसे ही क्रोधित तेवर दिखाते हुए अपना विरोध प्रकट किया है।

लेकिन यह तो सोचो कि क्या केवल एक साथ तीन तलाक़ पर प्रतिबंध लगाने से ही मुस्लिम महिलाओं को संवैधानिक बराबरी मिल जायेगी? अभी तो उन्हें "पुनः विवाह संबंधित हलाला जैसी कुरीतियों" और "बच्चों सहित अपना भरण पोषण कैसे हो" की विकट समस्याओं के लिए संघर्ष करना ही होगा। यह अभी मुस्लिम कुरीतियों के विरुद्ध महिलाओं के मानवाधिकारों के संघर्ष का आरम्भ है.....आगे अभी और कठिन मार्ग हैं।

ध्यान रहें की यह सारा विवादित विषय केवल मुस्लिम पीड़ित महिलाओं की ओर से ही उठाया जा रहा है और वे स्वयं ही इसके लिए संघर्षरत है। अतः यह सोचना कि इसमें किसी प्रकार की राजनीति हो रही है या किसी विशेष राजनैतिक दल को कोई लाभ होगा सरासर गलत है। यह शुद्ध रुप से न्यायिक प्रक्रिया है और भारतीय न्याय व्यवस्था का एक ऐतिहासिक साहसिक कदम माना जा सकता है। अतः समस्त देशवासियों को माननीय सर्वोच्च न्यायालय में विश्वास रखते हुए उसके निर्णय का सम्मान करना चाहिए।

विनोद कुमार सर्वोदय
गाज़ियाबाद
Guptavinod038@gmail.com

****

प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे

जहाँ घोषणा राम के नाम की है,
जहाँ कामना कृष्ण के नाम की है।
अहिंसा जहाँ शुद्ध-बुद्धार्य की है,
प्रशंसा जहाँ शंकराचार्य की है।
वहाँ दैव ने दिव्य योगी उतारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

अनायास चेतां गया एक चूहा,
गिरी भूल, ऊँची चढ़ी उच्च ऊहा।
जड़ीभूत भूतेश की भक्ति भागी,
महादेव के प्रेम की ज्योति जागी।
उठे इष्ट की ओर सीधे सिधारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

हितू बन्धू, माता, पिता, मित्र छोड़े,
लगे मुक्ति की खोज में बन्ध तोड़े।
भले भोग त्यागे, गही योग-शिक्षा,
फिरे देश में माँगते धर्म-भिक्षा।
बने भद्रिका-भारती के दुलारे
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

टिका टेक, ठाना उसी ठौर जाना,
जहाँ ठीक पाना सुना था ठिकाना।
मिले योगियों से, निकाली कचाई,
मिटा अन्धविश्वास, सूझी सचाई।
हुए जा 'विरजानन्द' के शिष्य प्यारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

मनोभावना साधना में मिला दी,
सुधा ध्यान को धारणा की पिलादी।
समाधिस्थ हो ब्रह्म से लौ लगाई,
मिली सम्पदा सिद्धियों को न भाई।
टिके एकता में, मिटे भेद सारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

रहे आदि से अन्त लौं ब्रह्मचारी,
पढ़ी वेद-विद्या, अविद्या बिसारी।
कहा सज्जनों से बनो स्वर्ग-भोगी,
भजो सच्चिदानन्द को, मुक्ति होगी।
न होना कभी आलसी यों पुकारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

प्रसादी सदा प्रेम की बाँटते थे,
घृणा से किसी को नहीं डाँटते थे।
सजीला सदाचार को जानते थे,
न चोखा किसी चिन्ह को मानते थे।
कभी वस्त्र धारे, कभी थे उघारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

न खाता किसे काल कूटस्थ अत्ता,
बही सिन्धु में बूँद की भक्तिमत्ता।
'दिया' न्याय का नीचता ने बुझाया
दया और आनन्द का अन्त आया।
दिवाली हुई हाय! होली, पजारे,
प्रतापी दयानन्द स्वामी हमारे।।

कविवर
पं. नाथूराम 'शंकर' शर्मा

जब भूतपूर्व प्रधानमन्त्री चौधरी चरणसिंह जी ने रखी आर्य समाज के सिद्धान्त की लाज

बात उस समय की है जब भारत के प्रसिद्ध उद्योगपति स्वनामधन्य स्वर्गीय घनश्याम दास जी विड़ला की शोक सभा का आयोजन दिल्ली नागरिक परिषद की ओर से फिक्की हॉल, नई दिल्ली में परिषद् के प्रधान श्री कंवरलाल गुप्ता (सांसद) की अध्यक्षता में किया गया था तथा जिसका संचालन श्री ताराचन्द खण्डेलवाल (सांसद) कर रहे थे।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि तत्कालीन गृहमंत्री चौ. चरण सिंह जी तथा वरिष्ठ अतिथि श्री एच.एन. बहुगुणा केन्द्रीय मंत्री थे। सभी मुख्य अतिथियों से जो मंच पर बैठे हुए थे श्री घनश्याम दास विरला जी की मूर्ति पर माला अर्पण करने के लिए कहा गया। चौ. साहब को छोड़कर सभी ने माला अर्पण की। पीछे से आवाज़ आई कि यह जाट कितना घमण्डी है कि माला अर्पण नहीं की। यह आवाज़ सुनकर मैं खड़ा हो गया और उत्तर दिया कि चौ. साहब निष्ठावान आर्य समाजी हैं, इसलिए मूर्ति पर माला नहीं चढ़ाई।

कार्यक्रम समाप्त होने पर जब चौ. साहब मंच से उतरे तब मैंने एक कागज पर लिखा "चौ. साहब आपने आर्य समाज के सिद्धान्त का सम्मान बढ़ाया है इसलिए मैं दिल्ली आर्य केन्द्रीय सभा की ओर से आपका अभिनन्दन करता हूँ।" कागज हाथ में देकर मैं एक तरफ खड़ा हो गया। चौ. साहब ने पढ़ा और पूछा कि यह मामचन्द रिवाड़िया कौन है? पास में ही श्री बलराज मधोक जी खड़े थे। उन्होंने कहा कि रिवाड़िया जी ये हैं। तब चौ. सहब ने कहा कि 'इतनी बड़ी सभा में एक व्यक्ति तो है जिसने मेरे कार्य की प्रशंसा की।'

मामचन्द रिवाड़िया, पूर्व मंत्री,
आर्य केन्द्रीय सभा नई दिल्ली
मो. 9212003162

****

बी.डी.डी.ए.वी धर्मशाला में रक्षाबंधन-पर्व मनाया गया

डी.ए.वी. धर्मशाला में आर्य युवा समाज धर्मशाला के प्रधान एवं मन्त्री आर्य युवा-समाज हि.प्र. श्री एस. एच. खान जी की अध्यक्षता में रक्षाबंधन के पर्व पर यज्ञ का आयोजन किया गया। प्रधानाचार्य ने अपने सम्बोधन में यज्ञ का महत्त्व बताया और रक्षाबंधन पर्व पर बोलते हुए प्रधानाचार्य कहा कि रक्षाबंधन भाई-बहन के पवित्र रिश्ते को उजागर करता हुआ अपनी बहनों की जीवन-भर रक्षा करने के प्रण को याद दिलाता है। यह प्यार के धागों का एक ऐसा पर्व है जो घर-घर मानवीय रिश्तों में नवीन संचार करता है। यह जीवन को प्रगति और मैत्री की ओर ले जाने वाला एकता का एक बड़ा पवित्र त्योहार है। प्राचार्य महोदय ने खेद व्यक्त करते हुए कहा कि आज प्यार की वह गहराई नहीं दिखाई देती अब उसमें प्रदर्शन का घुन लग गया है। राखी का रिश्ता महज कच्चे धागों की परम्परा नहीं है। लेन-देन की परम्परा में प्यार का कोई मूल्य भी नहीं है। इस परम पावन पर्व पर भाईयों को ईमानदारी से पुनः अपनी बहन ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण नारी जगत की सुरक्षा और सम्मान करना चाहिए तभी राखी का यह पर्व मनाना सार्थक है। इससे पूर्व विद्यालय में छात्र-छात्राओं ने राखियों का निर्माण करके सरहदों पर तैनात सैनिकों के लिए पुलिस अधीक्षक (काँगड़ा) डा. रमेश छाटजा को भेंट की गई।

सहारनपुर में खलासी लाइन आर्य समाज में पं. सत्यपाल पथिक अभिनन्दन समारोह

आर्य समाज खलासी लाइन के वेद प्रचार सप्ताह के सात दिवसीय कार्यक्रम में महिला सम्मेलन के अन्तर्गत आर्य जगत् के विश्व विख्यात रचनाकार एवं भजनोपदेशक पं. सत्यपाल 'पथिक' का अभूतपूर्व अभिनन्दन किया गया। राजकुमार आर्य व रमेश राजा ने अभिन्दन पत्र भेंट किया। 'पथिक' जी के स्वागत में सभा मंच तक महिलायें व पुरुष पंक्तिबद्ध खड़े थे। उनके आगमन पर गुलाब की पंखड़ियों की वर्षा कर उन्हें मंच तक पहुँचाया गया। अभिनन्दन समापन पर ओ३म् का पटका पहना कर स्वागत शृंखला को विराम दिया गया।

सम्मान से द्रवित 'पथिक' जी ने अपने भावुक उद्बोधन में महर्षि दयानन्द को उद्घृत करते हुए कहा कि ऋषि ने राष्ट्र उत्थान के लिए ईटें पत्थर खाये, 17 बार विष पिया, राजा-महाराजाओं के दमन चक्र को झेला। आज उनके शिष्य का यह अद्भुत स्वागत महर्षि की नीतियों का प्रतिफल है। नारियों पर बोलते हुए उन्होंने कहा-नारी नर व सृष्टि की निर्मात्री है। उसका शक्तिशाली होना आवश्यक है।

अजमेर से पधारे आचार्य सोमदेव ने विद्योत्तमा का उदाहरण देते हुए नारी की सशक्त भूमिका को अनिवार्य बताया। मुम्बई से आमन्त्रित पं. वीरेन्द्र मिश्र ने नारी उत्थान सम्बन्धित भजनों से असंख्य श्रोताओं को भावुक कर दिया।

कार्यक्रम में उपस्थिति से पूरा सत्संग हाल खचा-खच भरा था।

देहरादून पुस्तक मेला वैदिक प्रचार का माध्यम बना

इस वर्ष देहरादून पुस्तक मेला वैदिक साहित्य के अध्यताओं के लिए आकर्षण के केन्द्र रहा। गुरुकुल पौंधा व दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के स्टालों पर पुस्तकें देखने वालों की भीड़ रही। राजपाल एण्ड संस के स्टाल पर उनके अनेक प्रकाशन उपलब्ध थे। गुरुकुल के स्टाल पर दो आर्य विद्वान डा. लक्ष्मी चन्द शास्त्री एवं श्री ऋतुराज शास्त्री जी अनेक विषयों पर चर्चायें कर रहे थे।

अनेक व्यक्तियों ने साहित्य क्रय किया। दो युवा मित्रों ने लगभग 1,500 रूपये की पुस्तकें क्रय कीं। आर्य बन्धु श्री विजय ममगांई जी ने पुस्तक मेले में आर्य साहित्य का स्टाल लगाने आये बन्धुओं का बहुत सहयोग किया। सारा दिन उनके पास बैठकर उनकी सहायता करते रहें। घर से भोजन आदि तैयार करा कर लाते है और स्टाल प्रभारी को कराते हैं। एक साधारण आर्थिक स्थिति वाला मनुष्य अपने सभी काम छोड़कर चार किमी. पैदल चलकर आता है और आर्य पुस्तक के स्टाल के प्रभारी बन्धु को भोजन भी कराता है यह चर्चा की विषय बना रहा। मेले में उत्तराखण्ड के विधायक श्री उमेश शर्मा भी दिखाई दिए मुख्यमंत्री जी व राज्यपाल जी ने इस मेले का उद्घाटन किया था।

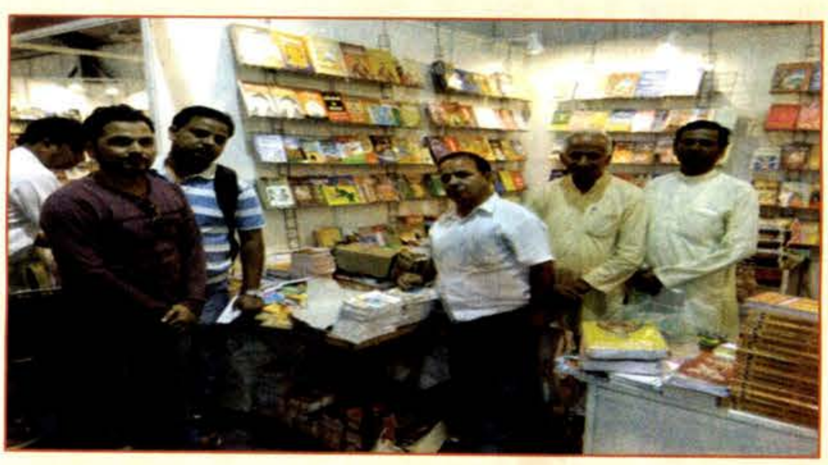

सैक्टर 22- A चण्डीगढ़ श्रावणी उपाकर्म सम्पन्न

आर्य समाज, सैक्टर-22A चण्डीगढ़ में एक सप्ताह तक बड़े ही हर्षोल्लास से श्रावणी उपाकर्म के अन्तर्गत चतुर्वेदशतकम् का विशेष पारायण यज्ञ किया गया। जिसकी पूर्णाहुति पर सैंकड़ों लोगों ने अपने पुराने यज्ञोपवीत परिवर्तन कर एवं नवीन धारण कर इस महोत्सव का आनन्द उठाया।

यज्ञब्रह्मा आचार्य राजू वैज्ञानिक, दिल्ली थे, जिनको मार्मिक उपदेश ने लोगों का ज्ञान वर्धन किया। शुद्ध-सुन्दर मन्त्रोच्चारण श्रीमती विनीता वेदरत्न-स्नातिका पार्णिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी ने किया। रुड़की से श्री कल्याण सिंह वेदी के मनोहारी भजनों ने श्रोतृवृन्द को मन्त्र मुग्ध कर दिया। जीन्द से आए योगाचार्य डॉ. सूर्यदेव आर्य ने बड़े ही रोचक ढ़ंग से स्वास्थ्य चर्चा में चार बातें कहीं (रखीं) 1. जल्दी सोना-जल्दी उठना। 2. कच्चा आहार का सेवन दिन में एक बार अवश्य करना। 3. खिल-खिलाकर हँसना व ताली बजाना। 4. प्राणायाम को समयानुसार अवश्य करना।

स्वामी ब्रह्मवेश जी की अध्यक्षता रही तथा प्रधान जी ने आये हुए समस्त विद्वत जनों एवं सभी महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद किया।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 06/07-09-2017

बी.बी. के. डी. ए.वी. अमृतसर के छात्रावास में सांध्यकालीन वैदिक यज्ञ का आयोजन

बी.के. डी.ए.वी कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर में आर्य युवती सभा द्वारा छात्रावास में नव सत्र 2017–2018 के शुभारम्भ के उपलक्ष्य में सांध्यकालीन यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें ईश्वर से महाविद्यालय के मंगलमय भविष्य, सद्बुद्धि, सफलता एवं विश्व–कल्याण की प्रार्थनाएँ की गईं।

प्राचार्या डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने अपने आशीर्वचन में छात्राओं को नैतिक मूल्यों के सदुपयोग, कठिन परिश्रम, अनुशासन एवं सकारात्मक सोच ग्रहण करने हेतु प्रेरित किया। उन्होंने उपस्थिति के समक्ष यज्ञ के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि प्रतिदिन प्रत्येक घर में यज्ञ होना चाहिए जिससे पर्यावरण की शुद्धता एवं समाज में व्याप्त भयंकर रोगों का खात्मा हो सके। प्राचार्या ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा हंसराज जी के त्यागमय एवं परोपकारी जीवन पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला। उन्होंने मई 2017 में मैरिट स्थान प्राप्त करने वाली छात्राओं को सम्मानित भी किया।

इस आयोजन में महाविद्यालय के शिक्षक वर्ग व गैर शिक्षक वर्ग एवं छात्राओं ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया और 'शन्ति पाठ' के साथ हवन यज्ञ सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. कंकड़बाग, पटना में वेद प्रचार सप्ताह कार्यक्रम सम्पन्न

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के दिशा निर्देश में तथा आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा बिहार पटना के आलोक में डॉ. जी. एल. दत्ता डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, ट्रान्सपोर्ट नगर, कंकड़बाग में वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया।

विद्यालय के प्राचार्य के निर्देशानुसार विभिन्न तिथियों में अलग–अलग कार्यक्रम मनाये गये।

बच्चों के बीच यज्ञ का आयोजन किया गया। जिसमें धर्माचार्य श्री मनोज शास्त्री ने वेदों का मानव जीवन में क्या महत्त्व है? इस विषय पर प्रकाश डाला। विद्यालय की प्रार्थना सभा में ''वेद मानव मात्र के लिये है'' इस विषय पर विद्यालय के धर्माचार्य मनोज शास्त्री ने संक्षिप्त व्याख्यान दिया। यज्ञ के तत्पश्चात श्री रमेश मिश्रा जी ने ''यज्ञ के महत्व'' पर विशेष रूप से प्रकाश डाला।

इसी क्रम में एक विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें विद्यालय के समस्त अध्यापक एवं अध्यापिकाओं ने भाग लिया। इस यज्ञ के मुख्य यजमान विद्यालय के प्राचार्य श्री हरि किशोर सिंह जी रहे। यज्ञ का संचालन श्री रमेश मिश्रा एवं मनोज शास्त्री ने किया। प्राचार्य महोदय ने अध्यापकों को संबोधित करते हुए बताया कि वेद से ही समाज का कल्याण हो सकता है। वेद सभी लोगो के लिये है। इसमें कोई भेदभाव नही है। वेद में कोई जात पात की बात नही है। वेद के अनुसार हम सभी मानव है और हमें वेद के अनुसार ही जीवन जीना चाहिए।

वेद प्रचार सप्ताह का समापन समारोह बड़ी धूम–धाम से मनाया गया जिसमें यज्ञ के तत्पश्चात समारोह के मुख्य अतिथि श्री आर.के. सिन्हा, माननीय सांसद राज्य सभा एवं विशिष्ट अतिथि श्री अरविन्द मार्दिकर, निदेशक, हिन्दुस्तान न्यूज ऐजेंसी, नागपुर एवं श्री अरुण कुमार सिन्हा, माननीय विधायक, कुम्हरार, पटना के द्वारा दीप प्रज्ज्वलन कर समारोह का विधिवत् शुभारंभ किया गया।

माननीय श्री आर. के. सिन्हा ने सभी को जन्माष्टमी की शुभकामनाएँ देते हुए वेद एवं ओ३म् के महत्व पर चर्चा की। उन्होंने वेदों में निहित अमन और शान्ति के बारे में जानकारी दी और कहा कि वेद प्रचार सप्ताह हर बार मनायें तथा वेद के महत्व को पूरे विश्व में फैलायें।

विद्यालय के बच्चों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये। धन्यवाद ज्ञापन के साथ शान्ति पाठ कर कार्यक्रम का समापन किया गया।

डी.ए.वी अम्बाला सिटी में नयी शक्ति व ऊर्जा से नवभारत निर्माण का संकल्प

71वें स्वतंत्रता दिवस पर विद्यालय में प्राचार्य डॉ. आर आर सूरी की प्रेरणा से विद्यार्थियों ने भ्रष्टाचार मुक्त भारत के निर्माण का संकल्प लिया जिसमें उन्होंने अपनी पूरी शक्ति व ऊर्जा को सकारात्मक दिशा दे कर एक उत्तम व नए भारत के निर्माण पर बल दिया।

विद्यालय में एक भव्य समारोह आयोजित किया गया जिसमें अम्बाला छावनी रोटरी क्लब के प्रेजिडेंट श्री आर. के. शर्मा, डिवेलपमैंट अधिकारी, भारतीय जीवन बीमा निगम, मुख्य अतिथि एवं श्री राजेश चौधरी, सेक्रेटरी, रोटरी क्लब, अम्बाला छावनी, श्री सुरेंदर गोयल, समाजसेवी तथा श्री इंदरजीत गुगलानी, समाजसेवी वशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

मुख्य अतिथि के स्वागत में दिए गए वक्तव्य मे प्राचार्य डॉ. आर आर सूरी ने श्री आर.के.शर्मा के सामाजिक व शैक्षणिक क्षेत्र में दिए जा रहे सहयोग की सराहना की एवं उनके कार्यों को सामाजिक उत्थान में मील का पत्थर की संज्ञा दी। बैण्ड की सलामी एवं ध्वजारोहण के पश्चात आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम में विद्यालय की जूनियर व सीनियर कक्षा के विद्यार्थियों ने देशभक्ति के गीतों पर आधारित समूह नृत्य व समूह गान प्रस्तुत किये।

इस माह में निर्धारित नैतिक मूल्य **'देशभक्ति'** पर छात्र एवं छात्राओं ने कविता पाठ प्रस्तुत किया और स्वतंत्रता सेनानियों को श्रद्धांजलि दी। फैंसी ड्रैस का आयोजन भी किया गया जिसमें छात्रों ने महान देशभक्त विभूतियों का रूप धारण कर उनकी याद दिलायी। इस माह में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को भी पुरस्कृत किया गया।

मुख्य अतिथि श्री आर.के.शर्मा ने सभी छात्रों एवं अध्यापकों को स्वतंत्रता दिवस की बधाई देते हुए इस आयोजन की सराहना की तथा प्राचार्य डॉ. आर आर सूरी एवं उनकी टीम की भूरि–भूरि प्रशंसा की। उन्होंने सभी विद्यार्थियों को रंग, जाति, धर्म आदि भावों से ऊपर उठकर एकजुट हो सामाजिक उत्थान के कार्यों को निरंतर करने की प्रेरणा दी।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**